सपनों की उड़ान

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
छत्तीसगढ़

Azim Premji Foundation

प्रकाशक के प्रति आभार व्यक्त करते हुए तथा बिना किसी परिवर्तन के, इस प्रकाशन का उपयोग अव्यावसायिक प्रयोजनों के लिए स्वतंत्र रूप से किया जा सकता है।

प्रकाशक :
अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
M-13 , अनुपम नगर
रायपुर – 492001
छत्तीसगढ़
www.azimpremjifoundation.org

प्रिंटर :

" सपनों की उड़ान "

छत्तीसगढ़ के शिक्षक साथियों को समर्पित

प्रस्तावना

किसी देश की दशा और दिशा काफी हद तक उसकी शिक्षा-व्यवस्था पर निर्भर करती है। देश और समाज में होने वाले बदलावों की नींव यहीं रखी जाती है। इस व्यवस्था के केंद्र में दो घटक सबसे महत्त्वपूर्ण हैं। एक, छात्र और दूसरा शिक्षक। सभी छात्र सीखने की अदम्य क्षमता के साथ विद्यालय आते हैं और शिक्षक इन छात्रों के सीखने को सुनिश्चित करने में संलग्न रहते हैं ताकि वे अपने जीवन में उचित निर्णयों तक पहुँच सकें। हमारा विश्वास है, देश में जनता की उचित और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की जिम्मेदारी सरकार की है और उसे ही अपनी जिम्मेदारी निभानी चाहिए।

वर्तमान में सरकारी विद्यालयों और शिक्षकों को लेकर घोर निराशा और अविश्वास का वातावरण बनाया जा रहा है और परिणामस्वरूप हमारे शासकीय विद्यालयों की विश्वसनीयता घट रही है। ऐसा समझा जाने लगा है कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और शासकीय विद्यालय एक साथ संभव नहीं।

लेकिन हमारे अनुभव इसके ठीक विपरीत हैं। हमारे देश में तो ऐसे बहुत से शिक्षक होंगे जो अपने श्रम और समझ से लगातार शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखने में अपना योगदान दे रहे हैं। हमारे राज्य में भी बहुत से ऐसे शिक्षक हैं जो अपने स्तर पर बहुत सारे प्रयास करते रहते हैं ताकि शिक्षा की गुणवत्ता बनी रहे। यहाँ ऐसे बहुत सारे शिक्षकों द्वारा किए जा रहे प्रयासों को संकलित करने का छोटा-सा कार्य किया गया है।

''सपनों की उड़ान'' आपको सौंपते हुए बेहद खुशी महसूस हो रही है। इस खुशी की वजह है वे अनुभव जो यहाँ कुछ इन शिक्षक साथियों के लीक से हटकर किए गए प्रयासों के रूप में दर्ज हैं। इसे अपनी तरह का नवाचार भी समझा जा सकता है। इस नवाचार में उन शिक्षक साथियों की कहानियां शामिल हैं जो अपनी प्रोफेशनल और व्यक्तिगत कठिनाइयों के बावजूद अपनी छोटी-छोटी पहल से स्कूल और समाज में बदलाव लाने की दिशा में काम कर रहे हैं। हमने यह भी देखा है कि अपने इन प्रयासों में वेह जाने अनजाने शिक्षा के अधिकार और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा की भावना के अनुसार काम करते हुए दिखाई देते हैं। अधिकांश प्रयास स्थानीय संसाधनों के साथ बच्चों की जरूरतों को ध्यान में रखते

हुए समुदाय के साथ मिलजुल कर किए गए हैं। इन प्रयासों की शृंखला काफी लम्बी है।

हमारे द्वारा संचालित यह प्रयासों की शृंखला का पहला कदम है, जिसके माध्यम से शिक्षा की गुणवत्ता सुनिश्चित करने की दिशा में एक सकारात्मक माहौल बने और ऐसे तमाम शिक्षक साथी जो अपने विद्यालय में अपने-अपने स्तर पर ऐसा ही कुछ प्रयास कर रहे हैं, उन्हें और हौसला मिले।

इस शुरुआती प्रयास में हम केवल १६ कहानियों को लेकर आये हैं। इनमें से ज्यादतर कहानियां छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले से हैं, कुछ कहानियां इस राज्य के दूसरे जिलों से भी हैं।

इन प्रयासों को हम आगे भी जारी रखेंगे। हमारे शिक्षक साथियों द्वारा किये जा रहे इस तरह के छोटे-छोटे परन्तु महत्वपूर्ण प्रयासों को पिरोकर हम इस तरह की शृंखला प्रकाशित करना चाहते हैं, जिससे दूसरे शिक्षक साथी अपने काम में आ रही मुश्किलों को समझ पायें और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के बीच आड़े आ रही समस्याओं को दूर कर पायें और इन कहानियों में वर्णित उदाहरणों से शिक्षक अपने काम में आ रही चुनौतियों को स्वीकार करने का मन बना पायें।

हम आभारी हैं, उन तमाम साथियों के जिन्होंने इस पुस्तिका में कहानियों के चयन, लेखन, संपादन और प्रकाशन में हमें सहयोग दिया है। इन साथियों में शिक्षक, शिक्षा विभाग से जुड़े पदाधिकारी, बच्चे, पालक, समुदाय और फ़ाउण्डेशन के सहकर्मी शामिल हैं।

अंत में हम पाठकों और शिक्षक साथियों से अनुरोध करना चाहते हैं कि इसे पढ़ने के बाद आपके मन में जो भी ख्याल आता है, उससे हमें जरूर अवगत कराएं। आपके बहुमूल्य सुझाव हमें अपने काम में आगे आवश्यक सुधार लाने में मदद करेंगे।

हमें आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि अजीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के इस काम में आपका सहयोग निरंतर बना रहेगा।

शुभकामनाओं के साथ

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन,

छत्तीसगढ़

''एक अच्छा शिक्षक आशा को प्रेरित कर सकता है, कल्पना को प्रज्वलित कर सकता है और सीखने के प्रति प्रेम पैदा कर सकता है।''

– ब्रैड हेनरी

विषय-सूची

1.	समस्या गिनना नहीं, सुलझाना है	06-11
2.	एक शिक्षिका, जिसने गाँव से जोड़ा है रिश्ता	12-17
3.	लड़कियाँ जब 'सयानी' हो जाती थीं......	18-21
4.	खिलौनों की टोकरी में ज्ञान	22-27
5.	शिक्षा की तस्वीर बदलने में लगा एक आदिवासी शिक्षक	23-31
6.	प्राइवेट स्कूल से शासकीय स्कूल में बच्चे	32-35
7.	समुदाय के सहयोग और कृषि-फंड से स्कूल का विकास	36-37
8.	शाला के विकास में शिक्षक और ग्रामीण साथ-साथ	38-41
9.	जंगल के बीच एक स्कूल	42-47
10.	वे गुरु जी थे और आज भी हैं!	48-51
11.	शिक्षक और बच्चों का दोस्ताना रिश्ता	52-55
12.	बच्चों ने सँजोए हैं सपने	56-61
13.	समाज और संस्कृति से जुड़ी शाला	62-65
14.	यदि शिक्षक अच्छे हों तो.....	66-71
15.	पुस्तकालय के लिए पुस्तक-दान की चाह	72-75
16.	खेल-खेल में पढ़ाई	76-79

समस्या गिनना नहीं, सुलझाना है १

''हम यहाँ समस्या गिनने या गिनाने के लिए नहीं, सुलझाने के लिए हैं।'' यह कहना है सुश्री उषा साहू का। जब हमने उनसे यह पूछा कि आपके स्कूल में क्या-क्या समस्याएँ हैं, तो उनका जवाब यही था। अकसर होता यह है कि जब आप किसी स्कूल में जाते हैं और यह सवाल करते हैं तब उसके शिक्षक और प्रधान अध्यापक सब एक नहीं, कई-कई समस्याएँ गिनाने लगते हैं! मगर छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के मगरलोड ब्लॉक के इमलीडीह गाँव की शासकीय प्राथमिक शाला की प्रधान शिक्षिका उषा साहू अलग किस्म की व्यक्तित्व हैं।

गोंड आदिवासी-बहुल इस गाँव की प्राथमिक शाला में कुल 81 बच्चे हैं। उनमें से 56 बच्चे आदिवासी परिवारों से हैं – 28 बालक और 28 बालिकाएँ। बाकी बचे 25 बच्चे – 8 लड़के और 17 लड़कियाँ – अन्य पिछड़ा वर्ग से हैं।

स्कूल में प्रभारी प्रधान शिक्षिका उषा साहू के अलावा तीन और शिक्षक हैं – गेंदलाल कंवर, गणेश्वरी नवरंगे और कौशल सिंह। ये सभी युवा हैं। उषा साहू खुद महज 30 साल की हैं। शायद सभी के युवा होने की वजह से स्कूल के शिक्षकों में एक जबर्दस्त उत्साह का माहौल साफ नजर आता है। यह बात हमें कौशल सिंह से बात करते हुए भी समझ में आयी और उनकी कक्षागत प्रक्रिया में भी देखने को मिली।

बच्चों से भी हमारी बातचीत हुई। चौथी कक्षा की छात्रा रंजना दीवान डॉक्टर बनना चाहती है, जबकि पाँचवीं कक्षा का छात्र फगेश दीवान शिक्षक।

गाँव की कुल आबादी 1,000 से ज्यादा है। गाँव में कुल परिवार हैं 185 । इनमें से करीब 163 परिवार गरीबी रेखा के नीचे गुजारा कर रहे हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात है कि यह स्कूल अपना शतक पूरा कर चुका है। यह स्कूल 1914 में स्थापित हुआ और शायद यही वजह है यहाँ ज्यादातर लोग पढ़े-लिखे हैं। ''हमारे बच्चों के माँ-बाप पढ़े-लिखे हैं। इस वजह से वे बच्चों की पढ़ाई-लिखाई को लेकर भी सजग हैं। बच्चों को होम-वर्क क्यों नहीं दिया, कभी-कभी यह चर्चा करने के लिए वे स्कूल में चले आते हैं। यही सब वजहें हैं कि बच्चों की पढ़ाई का स्तर अच्छा है।''

पिछले साल गाँव के स्कूल में 103 बच्चे पढ़ते थे। इस साल 81 बच्चे हैं। इस बारे में उषा साहू का कहना है, ''इसके लिए गाँव में जन्म-दर में कमी एक वजह हो सकती है, क्योंकि अब ज्यादातर लोग परिवार-नियोजन अपनाने लगे हैं और छोटे परिवार की राह पर हैं।''

स्कूल में क्या-क्या सुविधाएँ हैं, इस पर उनका कहना है, ''स्कूल की जो भी आवश्यकताएँ हैं, वह सब उपलब्ध हैं। स्कूल के भवन में 5 कमरे हैं। स्कूल में बिजली है और कक्षाओं में पंखे हैं। बच्चों के बैठने के लिए पर्याप्त टाट-पट्टियाँ हैं। बालक और बालिकाओं के लिए अलग-अलग शौचालय है, वहीं विशेष आवश्यकताओं वाले छात्र-छात्राओं के लिए एक शौचालय एक माह पहले बना है (लेकिन अब उसकी टंकी का कवर टूट चुका है)।''

हमने पूछा, ''शिक्षकों के लिए शौचालय है?''

''नहीं, शिक्षकों के लिए अलग से शौचालय नहीं है।'' उषा मैडम ने जवाब दिया।

स्कूल में पानी के लिए हैंड पम्प है, पर मोटर पम्प नहीं है और चहारदीवारी की समस्या है। मध्याह्न भोजन की व्यवस्था ठीक है और बच्चे एक साथ पुरानी इमारत में बैठकर खाना खाते हैं।

इस क्षेत्र के कुछ दूसरे स्कूलों की तरह इस स्कूल में खेती के लिए जमीन है। इसे स्कूल की ओर से रेघा में दिया जाता है। प्राथमिक शाला के पास ढाई एकड़ और माध्यमिक शाला के पास डेढ़ एकड़ जमीन है। पिछले साल प्राथमिक शाला की उस जमीन से 13,000 रुपये मिले थे, जब कि माध्यमिक शाला की जमीन से 11,000 रुपये। उन पैसों से शालाओं के विकास का काम किया जाता है। पिछले साल स्कूल बिल्डिंग की मरम्मत का काम किया गया। स्कूल की छत से पानी टपकता था। उसकी मरम्मत में 30,000 रुपये खर्च हुए। इसके लिए पैसा इस तरह से इकट्ठा किया गया - शासन की ओर से आने वाले 10,000 रुपये और खेती के फंड से 20,000 रुपये (पिछले साल के 13,000 और उसके पहले साल के बचे हुए 7,000 रुपये)।

''गाँव की पालक समिति के अलावा आम ग्रामीण भी स्कूल के विकास में अपना योगदान देने के लिए उत्साहित रहते हैं। खास बात यह है कि गाँव के लोग शिक्षकों पर भरोसा करते हैं।'' यह कहना है सुश्री उषा साहू का।

''हमारे गाँव के 6 बच्चे प्राइवेट स्कूल में जाते हैं। पहले जाने वाले बच्चों में से 5 बच्चे वापस हमारे स्कूल में दोबारा दाखिला ले चुके हैं। हमारा प्रयास है कि हमारे गाँव का कोई भी बच्चा प्राइवेट स्कूल में न जाए और हम बच्चों को वह सब शिक्षा दे पाएँ जो प्राइवेट स्कूल में दी जाती है, जो बच्चों और पालकों के आकर्षण का केंद्र है।'' सुश्री साहू ने आगे कहा।

सुश्री उषा साहू ने अपने शिक्षक-जीवन के बारे में कहा, ''मैं शुरू से शिक्षक बनना चाहती थी। मेरे पापा भी शिक्षक थे और मैं उनसे प्रभावित थी। अब यह स्कूल मुझे पहले से ज्यादा अच्छा लगने लगा है, खासकर छोटे बच्चों के साथ काम करने का अपना एक अलग ही आनंद है। इसलिए अब यह स्कूल छोड़कर मैं कहीं नहीं जाना चाहती हूँ।''

अपनी शाला और माध्यमिक शाला के सहयोगियों के बारे में उनका कहना है, ''हम सब मिलजुलकर काम करते हैं। कभी-कभी हम कई मुद्दों पर जमकर बहस भी करते हैं। कभी-कभी मनमुटाव भी होता है, लेकिन साथ ही हम सब यह समझते हैं कि यह सब काम हमें ही करना है और उसे हम सब मिलकर करते हैं।''

''गाँव में राजनीति होती है? क्या यहाँ भी स्कूल को लेकर राजनीति होती है?''

इस पर उन्होंने कहा, ''गाँव में लोग अलग-अलग पार्टी से जुड़े हैं, पर स्कूल के मुद्दे पर सब एक हो जाते हैं।''

3 साल से इस स्कूल में सेवा दे रही उषा मैडम स्कूल को लेकर अपने सपने के बारे में कहती हैं, ''हम बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दें। बालक और पालक कभी असंतुष्ट न रहें। उन्हें शासकीय नौकरी मिले या न मिले, पर बच्चे देश का सभ्य नागरिक जरूर बनें।''

एक शिक्षिका, जिसने गाँव से जोड़ा है रिश्ता

२

जब हम कांकेर से करीब 5 किलोमीटर दूर मोदी मोटवाड़ा गाँव के प्राथमिक स्कूल में पहुँचे तो हमारा स्वागत माथे पर टीका लगाकर किया गया। उसी समय स्कूल में एक बुज़ुर्ग का आगमन हुआ। स्कूल की प्रभारी प्रधान शिक्षिका अनुसुइया देवी जैन ने उनके पैर छूकर अभिवादन किया और उनकी तबीयत के बारे में जानकारी ली। इन्होंने उनके आने का कारण पूछा और हमसे उनका परिचय भी कराया। उनके जाने के बाद इन्होंने बताया कि वे इस गाँव के एक बुज़ुर्ग हैं और हम इन्हें बड़े बाबा कहकर पुकारते हैं।

1973 में स्थापित इस स्कूल में अनुसुइया देवी 2008 से पदस्थ हैं। यहाँ फिलहाल 42 छात्र-छात्राएँ और 3 शिक्षक हैं। अनुसुइया देवी नियमित हैं, जबकि अन्य 2 शिक्षिकाएँ शिक्षाकर्मी हैं। स्कूल की दीवार पर गाँव की आबादी के बारे में जानकारी लिखी है। गाँव की कुल आबादी 466 है। गाँव में कुल 85 घर हैं। इनमें आदिवासियों की तादाद है 241, अनुसूचित जाति की तादाद है 33, पिछड़ा वर्ग की तादाद है 164 और अन्य की तादाद है 16। इस आबादी में कुल 235 महिलाएँ और 231 पुरुष हैं।

अनुसुइया ने बताया, ''यहाँ के ज्यादातर ग्रामीण गरीब किसान, खेतिहर मजदूर और दिहाड़ी मजदूर हैं। जब मैं इस स्कूल में आई, तब यहाँ 37 बच्चे थे। स्कूल का समुदाय के साथ कोई समन्वय नहीं था। गाँव के लोग स्कूल के मामले में सहयोग नहीं करते थे और हमसे मिलते-जुलते भी नहीं थे। जाहिर है, जब पालक जागरूक नहीं हैं तब बच्चों की शिक्षा को लेकर वे कितने सजग होंगे। मैंने भी ठान लिया कि जब तक गाँव वालों को स्कूल से जोड़ नहीं लूँगी, तब तक चैन से नहीं बैठूँगी।''

अनुसुइया ने यह भी बताया, ''स्कूल बिल्डिंग और कैम्पस भी ठीक नहीं था। मैंने साफ-सफाई करवाई और फिर अपना पैसा खर्च करके शाला की दीवारों में कुछ शैक्षिक चित्र बनवाए। मैंने ग्रामीणों, और खासकर महिलाओं, को स्कूल की ओर आकर्षित किया। पहले महिलाएँ हमारे स्कूल के नल से पानी लेने आती थीं, तो वे स्कूल की तरफ देखती भी नहीं थीं। पेंटिंग ने उनका ध्यान खींचा। मैंने मौका देखकर उन्हें स्कूल के अन्दर बुलाना शुरू किया। इस तरह मैंने उनकी झिझक तोड़ी और कहा कि यह आपका स्कूल है, ये सब आपके बच्चे हैं, आप सबको आना चाहिए। तब उन महिलाओं ने कहा – मैडम पहले स्कूल अच्छा नई दिखत रिहिस, हमन ला कभु कोई बुलाइस भी नईं, अब स्कूल बढ़िया दिखथे।''

अनुसुइया ने अपनी बात जारी रखी, ''फिर 26 जनवरी यानि गणतंत्र दिवस आया। हमने योजना बनाई कि इस दिन गाँव के सभी लोगों को स्कूल में बुलाएँगे और उन्हें सम्मानित करेंगे। हमने सभी ग्रामीणों के घर जाकर उन्हें गणतंत्र दिवस समारोह में आने का न्योता दिया। बहुत सारे लोग आए। इनमें महिलाएँ भी शामिल थीं। हमने उन सबको इस दिवस के महत्व के बारे में बताया और उन्हें सम्मानित किया। हमने सबके माथे पर टीका लगाया, बड़ों के पैर छुए। छोटों ने हमारे पैर छुए। इस तरह से एक नए रिश्ते की शुरुआत हुई। दरअसल, पैर छूकर अभिवादन करना गाँव की परम्परा है। इसे अपनाने से गाँव वाले हमसे बड़ी ही सहजता से जुड़ गए।''

इस बातचीत के बीच एक युवक ने अनुसुइया जी के पैर छूकर अभिवादन किया। अनुसुइया जी ने उसका हमसे परिचय कराया। इन्होंने बताया कि ये और इनके साथी गर्मी की छुट्टी के दौरान भी स्कूल के बगीचे में पानी देने आते हैं, यही वजह है कि हमारे स्कूल का बगीचा खिला हुआ है। युवक ने बताया, ''अनुसुइया दीदी

के प्रयास से स्कूल में काफी सुधार आया है। उनके आने के बाद स्कूल के बच्चे काफी तेज हो गए हैं। स्कूल का माहौल अच्छा हुआ है और हम लोगों को भी स्कूल आना अच्छा लगता है।''

हमने पूछा, ''पढ़ाई-लिखाई का स्तर ठीक करने के लिए आपने क्या किया ?''

इन्होंने बताया, ''इसके लिए अतिरिक्त समय दिया। शिक्षा के अधिकार यानी आरटीई के तहत स्कूल में 10 बजे आना तय हुआ है। मैं तो शुरू से 10 बजे आती हूँ और 5 बजे जाती हूँ। हमारे साथी शिक्षक भी काफी मेहनत करते हैं। पहले पालकों में शिक्षा के प्रति जागरूकता नहीं थी। हमने पालकों के साथ बैठक की। उनसे कहा कि आप सब यह आदत बनाइए कि अपने बच्चों को एक घण्टा समय जरूर देंगे।''

इनके अनुसार, "हमने पंचायत भवन में नव-प्रभात केन्द्र खोला, जहाँ हर रोज शाम को पालक अपने बच्चों को लेकर आते हैं। वहाँ स्कूल प्रबंधन कमेटी के सदस्य बच्चों को पढ़ाने में मदद करते हैं। जो पालक बिलकुल पढे-लिखे नहीं हैं, वे भी अपने बच्चों के साथ आते हैं और बच्चों को पढ़ते हुए देखते हैं। अब पालक काफी उत्साहित लगते हैं। उनमें अपने बच्चों की पढ़ाई को लेकर एक जिम्मेदारी की भावना दिखाई देती है। गाँव वालों का कहना था कि उन्हें यह एहसास पहले कभी किसी ने कराया ही नहीं।"

अनुसुइया जी पूरे आत्मविश्वास से कहती हैं, "इन बच्चों को 15 साल बाद देखिएगा – ये क्या से क्या करके दिखाएँगे!" इनके इस आत्मविश्वास के पीछे गाँव वालों का भी साथ दिखाई देता है। रामकुमार कुलदीप एक कृषि मजदूर हैं। यह कहते हैं, "दीदी के बारे में जितना बोलें, कम है। स्कूल के प्रति उनका लगाव बहुत है। उन्होंने स्कूल को अपना काफी समय दिया है और अब भी देती हैं। हमने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि हमारे स्कूल में एक ऐसी शिक्षिका आएँगी।"

अभी हमारी बात चल ही रही थी कि एक महिला आती दिखाई दी। अनुसुइया जी उठकर सामने वाले क्लास रूम में गईं और करीब दो साल के एक बच्चे को गोद में लेकर बाहर आईं। महिला पहले अनुसुइया जी को और फिर बच्चे को देखकर मुस्कराई। फिर वह बच्चे को गोद में लेकर चली गई। तब मुझे याद आया कि अनुसुइया जी एक क्लास में बच्चों के बीच बैठकर गणित के बारे में कुछ समझा

रही थीं। गिनती सिखाने के लिए वे अपने हाथ की चूड़ियों के साथ-साथ बच्चों के हाथ की चूड़ियों का भी उपयोग कर रही थीं। बच्चों को इसमें काफी मजा आ रहा था। वहाँ लगभग दो साल का एक बच्चा भी बैठा था, जिसे वे बीच-बीच में दुलारती जा रही थीं। उस समय मेरे मन में सवाल आ रहा था कि यह नन्हा बच्चा यहाँ क्या कर रहा है। अनुसुइया जी वापस आईं तो हमने इस बारे में पूछा।

उन्होंने बताया, ''यह महिला एक खेतिहर मजदूर है। इसकी बेटी हमारे यहाँ दूसरी कक्षा की छात्रा है और यह बच्चा उसका छोटा भाई है। जब यह खेतिहर मजदूर माँ पास के गाँव के खेतों में काम करने जाती थी, तब छोटे भाई की देखभाल के लिए उसकी बहन भी साथ चली जाती थी या घर में रहकर देखभाल करती थी। तब मैंने इस महिला से बात की और कहा कि आप छोटे बेटे को भी बेटी के साथ ही स्कूल भेज दिया करो, ताकि उसकी पढ़ाई भी जारी रह सके। तब से वे दोनों स्कूल आते हैं। जब माँ काम से वापस आती है तो बेटे को अपने साथ लेकर चली जाती है। अगर हम उस छोटे बच्चे को स्कूल आने नहीं देते तो यह छात्रा भी नहीं आती। इस तरह हम इन छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देते हैं ताकि उनकी भावनाओं को ठेस न पहुँचे और उनसे एक पारिवारिक रिश्ता कायम हो।''

इसी बीच एक बच्चा आया जिसके पैर में काँटा चुभ गया था। वह लँगड़ाकर चल रहा था। अनुसुइया जी उसके पैर से काँटा निकालने लगीं। काँटा निकल गया तो बच्चा मुस्कुराता हुआ वापस चला गया। अनुसुइया जी बार-बार बच्चों और गाँव वालों से रिश्ता जोड़ने की बात करती हैं। वह रिश्ता यहाँ साफ नजर भी आता है।

लड़कियाँ जब 'सयानी' हो जाती थीं..... ३

आप ने कहीं 'शासकीय पुत्री शाला' नामक कोई स्कूल देखा है? शायद ही देखा हो! हमने तो नहीं देखा! शायद हम यह जान भी नहीं पाते कि इस नाम से कोई स्कूल रहा होगा, अगर हम लोहरसी के उस स्कूल नहीं गए होते और उनका पुराना रजिस्टर नहीं खँगाले होते। आज यह स्कूल खुद ऐसा नहीं लिखता। 1918 में स्थापित यह स्कूल पिछले साल तक 'शासकीय प्राथमिक कन्या शाला' के नाम से जाना जाता था, जो इस सत्र से सह-शिक्षा शाला में परिवर्तित हो गया है और इस सत्र से केवल 'शासकीय प्राथमिक शाला, बाजार पारा, लोहरसी' के नाम से जाना जाने लगा है। हमने उन दस्तावेजों में यह देखने की कोशिश की कि यह 'पुत्री शाला' से, 'कन्या शाला' नाम में कब तब्दील हुआ तो पता चला कि 1955 तक के दस्तावेज में ही 'पुत्री शाला' लिखा हुआ है।

हम बात कर रहे हैं एक ऐसे स्कूल की जो छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर से लगभग 85 किमी दूर, धमतरी जिले के लोहरसी गाँव में मौजूद है। यूँ तो आज भी उस स्कूल में बहुत कुछ बदलाव नजर नहीं आता और यह आम शासकीय स्कूल की तरह ही है। पिछले साल जब हम गए थे, तब स्कूल परिसर में कंक्रीट के 4 कमरों के साथ खपरैल का वह जर्जर भवन भी था, जिसे अभी पखवाड़े पहले ही ढहा दिया गया है। वहाँ छात्राएँ मध्याह्न भोजन करती थीं।

उस स्कूल में कुछ ऐसे दस्तावेज हैं, जो उस स्कूल के बारे में पूरा पिटारा खोल के रख देते हैं। ''जब हम स्कूल की सफाई कर रही थीं, तब हमें लकड़ी की कुछ पुरानी पेटियाँ मिलीं जिनमें फटे-पुराने और दीमक लगे दस्तावेज और रजिस्टर दिखाई दिए। हमने उन्हें सहेज कर निकाला और देखा कि यहाँ तो स्कूल की स्थापना-वर्ष का भी रजिस्टर है! इसमें दाखिल-खारिज रजिस्टर से लेकर वार्षिक परीक्षाफल-पंजी और दैनिक उपस्थिति पंजी भी शामिल है। अब हमने उन पर कवर लगाकर सहेज कर रखा है।'' - यह कहना है स्कूल की शिक्षिका नीलिमा नेताम का।

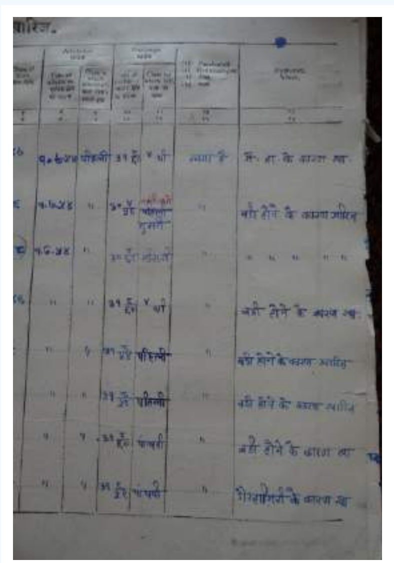

दीमक खाए प्रमोशन रजिस्टर में स्याही में डुबाकर लिखने वाली कलम से लिखी गई जिन बातों ने हमारा ध्यान खींचा, वह है बच्चों के नाम। इसमें सरनेम की जगह सीधे जाति का उल्लेख है, जैसे - मंगतीन बाई तेलिन, राजो बाई मरारीन, रमसीर बाई तेलिन और शांवरी बाई गोंड़िन, जबकि आज तेलिन की जगह साहू, मरारीन की जगह पटेल और गोंड़िन की जगह मरकाम, नेताम आदि गोंड़ आदिवासियों का सरनेम लिखा जा रहा है। यह तब की बात है, जब रजिस्टर प्रिंटेड नहीं था, उसके कालम हाथ से लिखे गए थे। उसके बाद का जो रजिस्टर हमने देखा, वह प्रिंटेड था। इसमें छात्राओं के नाम, अभिभावकों के नाम और जाति के नाम का कॉलम है, इसलिए नाम के साथ जाति नहीं लिखी गई।

यही नहीं, जब विद्यालय का दाखिला और खारिज रजिस्टर देखते हैं तो उसमें स्कूल छोड़ने की वजह काफी चौंकाने वाली है। ज्यादातर लड़कियों के स्कूल छोड़ने की वजह लिखी गई है 'बड़ी हो जाने के कारण' या 'सयानी हो जाने के कारण' (बड़ी या सयानी का स्थानीय मतलब है मासिक चक्र/धर्म शुरू होना)। कुछ में 'गैर-हाजिर होने के कारण' और कुछ में 'गाँव छोड़कर जाना' (पलायन) भी वजह लिखी गई है। जैसे जोहत्री बाई का जन्म जून 1946 लिखा गया है। उसका दाखिला 1954 लिखा गया है, यानि 8 साल की उम्र में उसने पहली कक्षा में दाखिला लिया। 1956 में जब वह दूसरी कक्षा में थी, उसने स्कूल त्याग दिया। इसके स्कूल छोड़ने की वजह लिखी गई है 'बड़ी होने के कारण!' वैसे ही एक और लड़की जिसका जन्म 1948 में हुआ था और जिसने 1954 में दाखिला लिया था – 1961 में (यानि 13 साल की उम्र में) जब वह तीसरी कक्षा में थी, पढ़ाई छोड़ दी थी और वजह वही थी, 'बड़ी होने के कारण!'

उस स्कूल के शिक्षक ज्योतिष विश्वास का कहना है, ''आजकल सतत व्यापक मूल्यांकन को लेकर काफी चर्चा है, उस समय भी यह मौजूद था और यह बहुत व्यापक था। 1936 की एक वार्षिक परीक्षाफल-पंजी में एक जगह लिखा गया है- दो बालिकाएँ सालाना इम्तेहान में शामिल नहीं हुई, किन्तु वे दोनों बहुत होशियार हैं, इसलिए उनका नाम अगली कक्षा में लिखा गया है।''

उस दौरान यहाँ लोहरसी के अलावा आमदी और मुजगहन की बालिकाएँ भी पढ़ने आती थीं। आज वहाँ के बच्चे वहीं पढ़ते हैं। लोहरसी में 1885 से एक बालक स्कूल था, जबकि यहाँ कन्याशाला 1918 में स्थापित हुई थी, यानि तकरीबन 32 साल बाद। या यूँ कहें यहाँ की लड़कियों को लड़कों के मुकाबले 32 साल बाद पढ़ने का अवसर मिला।

इस कन्या शाला में अब तक कुल 18 प्रधान पाठकों में से 11 महिलाएँ रही हैं। आज यह कन्याशाला सह-शिक्षा शाला में तब्दील हो गई है। 1918 में इस स्कूल में कुल 64 लड़कियाँ पढ़ती थीं। आज यहाँ 75 बच्चे पढ़ रहे हैं जिनमें 65 लड़कियाँ और 10 लड़के हैं जिन्होंने इस बार दाखिला लिया है। स्कूल में इस बदलाव को स्कूल के प्रभारी प्रधान पाठक सुनील कुमार यदु अच्छा मानते हैं। उनका कहना है, ''पहले ये लड़कियाँ जब बड़ी होकर सह-शिक्षा में प्रवेश लेती थीं तो उनमें झिझक रहती थी। अब यह झिझक दूर होगी। अब इस तरह के अलग स्कूल की जरूरत भी नहीं है, क्योंकि अब लड़कियों की शिक्षा को लेकर समाज की मान्यता बदल रही है।''

इस स्कूल के इतिहास ही नहीं, वर्तमान में भी उम्मीद नजर आ रही है। स्कूल के शिक्षक ज्योतिष विश्वास ने छात्र-छात्राओं के साथ मिलकर पाठ्य-पुस्तक आधारित चित्र दीवारों पर बनाए हैं। इससे बच्चों का पढ़ना-लिखना, सोचना-समझना आसान हो रहा है। इस स्कूल में अभी भी ज्यादातर गरीब घर की लड़कियाँ पढ़ रही हैं। इनमें से ज्यादातर के पाँवों में चप्पल नहीं होते हैं। लेकिन लगता है, इनके इरादे काफी बुलंद हैं। यह अलग बात है कि सरकार को शासकीय स्कूलों पर और ध्यान देने के साथ-साथ व्यवस्थागत बदलाव लाने की जरूरत है। कहीं ऐसा न हो कि ये कन्याएँ पढ़-लिखकर भी वह मुकाम शायद न पाएँ, जो वे पाना चाहती हैं।

खैर, इस स्कूल के दस्तावेज धमतरी ही नहीं, ग्रामीण भारत में उस दौरान लड़कियों की अवस्था और उनकी शिक्षा-व्यवस्था के बारे में एक महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक धरोहर हैं। इन दस्तावेजों के बारीकी से अध्ययन और शोध से आजादी के पूर्व और बाद में नारी-शिक्षा में आए बदलाव को स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है।

खिलौनों की टोकरी में ज्ञान ४

"जो छोटे बच्चे होते हैं, उनको खिलौनों से बहुत ज्यादा प्रेम होता है। दूसरी बात, उनको गीत, कविता और नृत्य से उतना ही जबर्दस्त लगाव होता है। अगर हम पुस्तक में ही घुस के रहेंगे कि उनको शब्दों का ज्ञान देना है, वाक्यों का ज्ञान देना है तो बच्चे उससे बोर हो जाते हैं। पढ़ाई के प्रति उनकी रुचि उठ जाती है। पर उसी चीज को अगर हम नृत्य करके दिखाते हैं, कविता से करवाते हैं, शिक्षण - सामग्री उनके हाथ में देते हैं तो उनकी रुचि उसमें बढ़ जाती है। बच्चे सीखने का बहुत ज्यादा प्रयास करते हैं। इसलिए इन चीजों का अधिक से अधिक इस्तेमाल करना चाहिए है।" यह कहना है सुश्री सारिका परदेसी का, जो शासकीय प्राथमिक शाला, परसतराई में शिक्षिका हैं और स्कूल की प्रभारी प्रधान शिक्षिका भी हैं। वे खिलौनों की टोकरी पसारकर बच्चों को पढ़ाती हैं।

छत्तीसगढ़ के धमतरी से करीब 10 किमी दूर परसतराई गाँव है, जहाँ यह स्कूल है। मैडम आज तीसरी कक्षा के बच्चों को पर्यावरण विषय के तहत जीव और निर्जीव का पाठ पढ़ाने वाली थीं। कक्षा में पहले से ही प्लास्टिक के खिलौनों की

एक टोकरी रखी गई थी। वे जैसे ही कक्षा में प्रवेश करती हैं, बच्चे इंग्लिश में उन्हें अभिवादन करते हैं – ''गुड मॉर्निंग मैडम!'' जैसा छत्तीसगढ़ के ज्यादातर स्कूली बच्चे करते हैं।

मैडम सारिका बच्चों से पूछती हैं, ''सब आए हैं?''
''यस मैडम,'' बच्चे बोलते हैं।
''सबकी तबीयत ठीक है? सब स्वस्थ हैं?''
''यस मैडम,'' बच्चे जवाब देते हैं।
फिर मैडम बोलती हैं, ''आज मैं पहले कुछ प्रश्न पूछूँगी, आपको उसका जवाब देना है।''
बच्चे बोलते हैं, ''ओके मैडम।''
फिर मैडम पूछती हैं, ''हम जीने के लिए क्या करते हैं?''
बच्चे बोलते हैं - ''साँस लेते हैं।''
''कैसे लेते हैं?''
''नाक से हवा लेते हैं।''
''साँस नहीं लेने से क्या होगा?''
''हम मर जाएँगे।''
''तो हम जीवित रहने के लिए क्या करते हैं? साँस लेते हैं। और साँस लेने के लिए हवा कहाँ से मिलती है?''
''पेड़-पौधों से।''
''तो हमें पेड़-पौधों की रक्षा करनी चाहिए या नहीं?''
''करनी चाहिए मैडम!''

दरअसल सारिका मैडम जीव और निर्जीव का पाठ पढ़ाने से पहले उसकी भूमिका बाँध रही थीं। फिर सारिका मैडम ने पप्पूजी के खिलौने का पाठ शुरू किया और बच्चों के साथ जमीन पर ही बैठ गईं। उन्होंने 'पप्पू जी के कई खिलौने' कविता गाते हुए, खिलौने की टोकरी (जिनमें जानवरों के भी खिलौने बहुत थे) से एक-एक कर खिलौना बाहर निकाला। फिर बच्चों से पूछा, ''आप लोगों ने चिड़िया-घर देखा है? बाहर में पंछियों को उड़ते देखा है? उनमें और इन खिलौनों में क्या फर्क है? जानवर वहाँ क्या करते रहते हैं?''

''मैडम! जानवर वहाँ घूमते रहते हैं, खाते पीते रहते हैं।''
''पेड़ों को छोटे से बड़े होते देखा है?''
''जी मैडम! पेड़ अपना भोजन स्वयं बनाते हैं।''
''इन जानवरों, पेड़ों और इन खिलौनों में क्या फर्क है?''
''जी मैडम, खिलौने निर्जीव हैं और जानवर और पेड़-पौधे सजीव हैं।''

इस तरह, उनका क्लास गीत गाते और उदाहरणों को रखकर समझाते-समझते आगे बढ़ता रहा। बच्चे काफी उत्साह के साथ उसमें हिस्सा लेते रहे।

हमने स्कूल का समय खत्म होने के बाद और मैडम के घर जाने से पहले, उनसे बातचीत की और जानना चाहा कि वे स्कूल के बच्चों और, सबसे महत्वपूर्ण बात, शिक्षा के बारे में वह क्या सोचती हैं?

''मुझे गर्व है कि मैं शिक्षक हूँ और अपनी जिम्मेदारी पूरा करने का प्रयास करती हूँ। हम जो भी बात बच्चों को बताते हैं, और अगर वे खुद वह नहीं करते तो उसे बच्चों को बताने का कोई मतलब नहीं होगा।'' यह कहना है शिक्षिका सारिका परदेसी का।

''कक्षा में जाने से पहले जिस विषय में पढ़ना है और जिस प्रकार की टिचिंग ऍड की जरूरत होगी, वह प्लान करके मैं घर से लेकर आती हूँ। कई बार ऐसा होता है कि वह चीज हमें नहीं मिल पाती, पर हमारे आसपास बहुत-सी चीजें होती हैं - जैसे, हमें वृक्ष और उसके अंगों के बारे में पढ़ाना है तो जो खरपतवार का छोटा-सा पौधा होता है उसको उखाड़ के उसके बारे में बताती हूँ। वहीं ताजे भोजन की बात हो तो मध्याह्न भोजन की जगह ले जाकर सफाई से कैसे खाना बनाते हैं, यह सब दिखाती हूँ। वैसे ही सामाजिक विज्ञान में बड़ी कक्षा के बच्चों को मैं पंचायत ले जाती हूँ, जहाँ वे पंचायत व्यवस्था के बारे में जानते हैं। वहीं जब मैं मध्याह्न भोजन के लिए चावल लेने जाती हूँ, तब हर बार एक-दो बच्चों को अपने स्कूटी में बैठाकर ले जाती हूँ, जहाँ वे सार्वजनिक वितरण-प्रणाली कैसे संचालित होती है, यह देख कर आते हैं। वे दूसरे बच्चों को भी बताते हैं। बहुत लोगों की सोच होती है कि हम नौकरी करने के लिए पढ़ाई कर रहे हैं। यह शिक्षा का मुख्य उद्देश्य नहीं है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है यह ज्ञान प्राप्त करना कि हम अच्छी और बुरी बातों को पहचान सकें, ताकि हम सही फैसला ले सकें और एक अच्छे इंसान बन सकें।''

अपने बारे में उन्होंने कहा, ''शिक्षकीय कार्य मुझे बहुत पसंद है। बचपन से मेरी रुचि रही कि मैं पढ़-लिखकर एक टीचर बनूँ। आज एक शिक्षिका के बतौर मैं गौरवान्वित महसूस करती हूँ।''

परसतराई स्थित यह प्राथमिक शाला बहुत छोटी है, पर यहाँ के बच्चों में गजब की ताजगी और स्फूर्ति दिखाई देती है, खासकर तब जब वे अपनी शिक्षिका सारिका मैडम की कक्षा में होते हैं। जाहिर है, ऐसे शिक्षकों से मिलकर यह सुकून और भरोसा मिलता है कि सरकारी स्कूलों में भी शिक्षा की गुणवत्ता में बदलाव हो रहा है।

शिक्षा की तस्वीर बदलने में लगा एक आदिवासी शिक्षक

५

महेंद्र कुमार बोरझा अपनी बाइक से उतरते ही सीधे उस क्लास-रूम में पहुँचते हैं जहाँ करीब 50 छात्र-छात्राएँ उनका इंतजार कर रहे थे। छात्र-छात्राएँ शिक्षक महेंद्र कुमार के पहुँचते ही अभिवादन करते हैं और महेंद्र उनसे 7 मिनट देरी से पहुँचने पर माफी माँगते हुए अपनी इंग्लिश लर्निंग की क्लास शुरू कर देते हैं। यह कक्षा जहाँ लगी है, वह स्कूल है शासकीय माध्यमिक शाला, बोडरा। यह स्कूल छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के आदिवासी विकास-खंड नगरी में स्थित है।

छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर से तकरीबन 160 किमी दूर है आदिवासी-बहुल यह बोडरा गाँव। इस गाँव और आस-पास के गाँव की कक्षा 9 वीं से लेकर स्नातक तक के बच्चे इस कक्षा में शामिल हैं। ये सब महेंद्र कुमार से इंग्लिश सीखने आते हैं। महेंद्र कुमार इस स्कूल में पिछले 4 साल से प्रधान शिक्षक हैं। स्कूल खुलने का

समय है सुबह 9 बजे, लेकिन वे घर से साढ़े 7 बजे निकलते हैं और स्कूल में 8 बजे से पहले पहुँच जाते हैं। वहाँ वे 8 से 9 बजे तक इंग्लिश क्लास लेते हैं।

9 बजे ये सारे बच्चे वापस चले जाते हैं, तब तक उनके स्कूल के बच्चे पहुँच चुके होते हैं। इस तरह इस स्कूल के प्रधान शिक्षक आसपास के गाँवों के छात्र-छात्राओं की क्लास लेते हैं। इसके पीछे उनका मकसद क्या है? वे क्यों इतनी मशक्कत कर रहे हैं? इसके लिए शासन की ओर से न कोई आदेश है और न उन्हें इसके एवज में कोई पैसा मिलने वाला है! ''इसके पीछे मेरी सोच यह है कि हमने एक छात्र के बतौर और बाद में नौकरी आदि के क्षेत्र में जिन मुश्किलों का - खासतौर पर इंग्लिश को लेकर - सामना किया है, वैसा कम से कम इन बच्चों को न करना पड़े। आज सभी क्षेत्रों में इंग्लिश जानना जरूरी हो गया है। चाहे उच्च शिक्षा का क्षेत्र हो या नौकरी या व्यापार का - सभी में इसकी जरूरत है।'' यह कहना है महेंद्र कुमार का। यह शिक्षा वे मुफ्त में दे रहे हैं। अपने इस कार्यक्षेत्र में शिक्षा का स्तर सुधारने में लगे महेंद्र कुमार खुद भी आदिवासी समुदाय से हैं।

''हम यहाँ इंग्लिश और इंग्लिश ग्रामर सीखने आते हैं। यह हमारे लिए बहुत जरूरी है।'' यह कहना है फुलेश्वरी यादव का, जो बी.एस-सी. प्रथम वर्ष की छात्रा है। वहीं इस इंग्लिश लर्निंग की विद्यार्थी ऐश्वर्या सेन का कहना है, ''मुझे इंग्लिश व्याकरण कुछ भी नहीं आता है। लेकिन अब लगातार अभ्यास के बाद यह समझ में आने लगा है।''

महेंद्र कुमार बोरझा जब 4 साल पहले इस स्कूल में आए, तब यहाँ स्कूल के नाम पर सिर्फ एक बिल्डिंग थी और एक शौचालय था। लेकिन अब स्कूल के चारों ओर चहारदीवारी बन चुकी है। चहारदीवारी के अंदर जो हैंड पम्प था, उसमें अब मोटर पम्प लग चुकी है और नलजल की व्यवस्था हो गई है। इसमें से निकलने वाली नाली के पानी का उपयोग फल, फूल और सब्जी की बागवानी में किया जा रहा है।

''हमारा स्कूल आसपास के स्कूलों से थोड़ा अलग है। यहाँ हमारे बैठने के लिए डेस्क-बेंच हैं, लाइब्रेरी है और यहाँ पढ़ाई भी अच्छी होती है।'' - यह कहना है 8 वीं की छात्रा रोशनी का।

स्कूल के सफाई कर्मचारी जी.के. कश्यप का मानना है - ''इस सब बदलाव के पीछे हमारे हैड मास्टर हैं, जो स्कूल के विकास में लगे रहते हैं। वे न केवल हमें और स्कूल के बच्चों को बल्कि गाँव के लोगों को भी प्रेरित करते रहते हैं।'' यहाँ गौरतलब है कि महेंद्र कुमार अपने प्रधान अध्यापक के कक्ष में ही अन्य शिक्षकों और यहाँ तक कि स्कूल के सफाई कर्मचारी और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के साथ बैठते हैं और उनके नाम की प्लेट उन कर्मचारियों की टेबुल पर रखी हुई है।

महेन्द्र कुमार के अनुसार, ''जब मैं पहली बार यहाँ आया, तब स्कूल में मूलभूत व्यवस्था का अभाव था। मैं स्कूल के विकास के लिए गाँव वालों की बैठक करना चाहा तो पता चला कि गाँव के लोग दो हिस्से में बँटे हुए हैं। तब मैंने ठान ली कि पहले गाँव वालों को एकजुट करना है। इसलिए बाकायदा 15 अगस्त को आजादी का जश्न मनाने से पहले मैंने सबको निमंत्रण-पत्र दिया गया। गाँव वालों ने इसमें बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। 2013-14 में नलजल योजना के लिए गाँव वालों ने करीब 50,000 रुपये इकट्ठे कर लिए और नलजल व्यवस्था को अंजाम दिया। इस वर्ष लोगों से पैसे नहीं, बल्कि श्रमदान लिया गया। इसके चलते मैदान का समतलीकरण हुआ और गाँव वालों ने एक प्लेटफार्म का निर्माण किया। आज स्कूल के बगीचे में फूल के पौधे, फलों के पेड़ और साग - सब्जी उगाए गए हैं। इन

पेड़-पौधों की देखरेख स्कूल के सभी छात्र-छात्राएँ और शिक्षक मिलकर करते हैं। यही नहीं, यहाँ कई आयोजन खास तरीके से किए जाते हैं-जैसे 3 दिवसीय वार्षिक उत्सव। इसमें पहले दिन खेलकूद का आयोजन, दूसरे दिन विज्ञान-प्रदर्शनी और तीसरे दिन सांस्कृतिक कार्यक्रम होता है।''

महेंद्र कुमार छात्र-छात्राओं को राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रमों में हिस्सा लेने के लिए प्रोत्साहित करते रहे हैं, जिसके चलते पिछले सालों में हर साल 5 से 3 छात्र-छात्राएँ राष्ट्रीय मेधावी अन्वेषण परीक्षा में पास हुए हैं, जिन्हें कक्षा 12 वीं तक हर महीने 500 रुपये स्कॉलरशिप मिलेगी।

महेन्द्र कुमार के इस तरह के प्रयास सिर्फ स्कूल की चहारदीवारी तक सीमित नहीं हैं। वे गाँव के उन बड़े और बुजुर्गों तक को पढ़ने-लिखने के लिए प्रेरित कर रहे हैं जिसके चलते पिछले साल 11 में से 10 व्यक्ति मुक्त विद्यालय के जरिये इम्तहान में बैठे और पास हुए हैं।

प्राइवेट स्कूल से शासकीय स्कूल में बच्चे

६

शहर हो या गाँव - हर जगह अब प्राइवेट स्कूलों की भरमार है। आज अभिभावक अपनी आर्थिक हैसियत के मुताबिक, और कई तो अपनी आर्थिक हैसियत से भी ज्यादा, खर्च करके अपने बच्चों का दाखिला प्राइवेट स्कूल में करा रहे हैं। ऐसी स्थिति में यह बात निश्चित तौर पर आश्चर्यजनक लगती है कि एक गाँव के कुछ अभिभावकों ने कुछ प्राइवेट स्कूलों से अपने 30 बच्चों के नाम कटवाकर एक शासकीय स्कूल में लिखवाया।

आखिर इन अभिभावकों ने ऐसा क्यों किया, कैसे किया और यह सब कहाँ हुआ? अगर इन अभिभावकों ने अपनी आर्थिक तंगी या मजबूरी के चलते या प्राइवेट स्कूल बंद हो जाने की वजह से ऐसा किया होता तो कोई बात न थी। पर इन अभिभावकों ने तो दूसरी वजह से ऐसा किया। आखिर वह वजह क्या है? और

बाकी बचे सवालों का भी जवाब चाहिए तो हमें मंदरौद के उस प्राथमिक विद्यालय में जाना होगा, जो छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के कुरुद ब्लॉक में है। गाँव के बीचों-बीच स्थित यह प्राथमिक शाला तकरीबन सौ साल पुरानी है।

''मेरे 2 बच्चे सरस्वती शिशु मंदिर में पढ़ रहे थे। अब उन्हें मैं वहाँ से ले आया हूँ। बच्चे बहुत खुश हैं। वहाँ वे दबाव में पढ़ते थे, यहाँ स्वतंत्र होकर पढ़ते हैं। आज जिस शासकीय स्कूल में बच्चे पढ़ रहे हैं, वह स्कूल तो आखिर हमारा है।'' यह कहना है प्राथमिक शाला, मंदरौद के शाला विकास प्रबंधन कमेटी के एक सदस्य धनुराम साहू का जो पंचायत में एक पंच भी हैं। इस स्कूल में बच्चों को दाखिला दिलाने के पीछे उनका एक तर्क यह भी है, ''आज पंच हूँ। कल पंच न होने की वजह से स्कूल प्रबंधन कमेटी की सदस्यता चली जाती है, तब भी इस स्कूल कमेटी का सदस्य बना रहूँगा, क्योंकि अब मेरे बच्चे इस स्कूल में हैं।''

आखिर स्कूल कमेटी में वह क्यों बने रहना चाहते हैं? इस पर उनका जवाब है, ''अब हमें समझ में आ गया है कि यह स्कूल हमारा है। अगर हम इसके विकास से नहीं जुड़ेंगे तो इसका विकास कैसे होगा? अगर इसका विकास नहीं होगा तो गाँव में बच्चों की शिक्षा का विकास कैसे होगा? प्राइवेट स्कूलों में प्रशिक्षित शिक्षक भी नहीं हैं, जबकि हमारे शासकीय स्कूल में प्रशिक्षित शिक्षक हैं। स्कूल के विकास के लिए कई तरह की योजनाएँ हैं, पर पालकों और गाँव के लोगों के बीच समन्वय के अभाव में उन योजनाओं का लाभ न तो स्कूल को और न स्कूली बच्चों को मिल पाता है। लेकिन जब से शाला विकास प्रबंधन कमेटी सक्रिय हुई है, तब से काफी कुछ बदल गया है।''

स्कूल कमेटी के एक और सदस्य नरेश कुमार पटेल इस बात पर अपनी सहमति जताते हुए कहते हैं, ''हाँ, अब बहुत कुछ बिलकुल बदल गया है। पहले हम स्कूल को बाहर से ही देखते थे। हमें तो यह भी पता नहीं था कि हमें स्कूल में जाने या स्कूल के मामले में कुछ बोलने का अधिकार है। पहले हम सोचते थे कि सरकारी स्कूल है, सरकारी टीचर हैं, सरकार पैसा देती है... हम क्या कहें! इसलिए हम संकोच करते थे। पर अब ऐसा नहीं है। हम तो अब छत्तीसगढ़ी में भी बोलते हैं और शिक्षक हमारी बात सुन रहे हैं और सहयोग कर रहे हैं। हम भी उनकी बात सुनते हैं, और उनकी भी समस्याओं को समझने और समाधान करने का प्रयास कर रहे हैं।'' मंदरौद प्राथमिक शाला प्रबंधन कमेटी में अब 16 सदस्य हैं। इनमें से 6-7

महिलाएँ हैं। ये सारे सदस्य शाला के विकास में सक्रिय और अहम भूमिका निभा रहे हैं। यही नहीं, जो पालक या ग्रामीण कमेटी के सदस्य नहीं हैं, वे भी अब स्कूल की ओर ध्यान देने लगे हैं।

यही नहीं, शाला प्रबंधन कमेटी के सदस्यों ने स्कूल के लिए मजदूरी तक की है और स्कूल के विकास के लिए पैसा इकट्ठा किया है। नरेश कुमार पटेल के अनुसार, ''यहाँ एक और जर्जर स्कूल बिल्डिंग थी। उसे ताड़ेने का काम पंचायत किसी ठेकेदार को दे रही थी। शाला कमेटी ने पंचायत से यह काम खुद ले लिया और सभी सदस्यों ने इस काम में मजदूरी की, मगर कोई पैसा नहीं लिया। इस तरह उस मजदूरी के पैसे और उस पुरानी बिल्डिंग में से निकली ईंट आदि को बेचने से 25,000 रुपये इकट्ठा हुए। उस पैसे से स्कूल की कई आवश्यकताएँ पूरी की गईं - जैसे स्कूल में बिजली लाना, स्कूल के कमरों में पंखे लगाना, कम्प्युटर लाना और पानी की व्यवस्था करना। सौ साल पुराने इस स्कूल में पहली बार पंखा लगा।'' इस तरह से स्कूल का एक तरह से आधुनिकीकरण हो गया।

शाला प्रबंधन कमेटी के एक और सदस्य हैं खिलेश्वर। उन्होंने यह याद दिलाया कि शिक्षक भी इस काम में अब सहयोग कर रहे हैं। उन्होंने कहा, ''सबसे बड़ी बात तो यह है कि जब हम श्रमदान कर रहे थे, तब कुछ शिक्षकों ने भी आगे बढ़कर इस काम में हमारा साथ दिया। जो शिक्षक पहले थाड़ा आना-कानी कर रहे थे, उनमें भी काफी बदलाव आया है।'' यही नहीं, अब पालक न केवल अपने बच्चों, बल्कि स्कूल के दूसरे बच्चों को भी जब गाँव की गली या नुक्कड़ में देखते हैं तो उनसे प्यार से स्कूल के बारे में पूछते हैं, उनकी परेशानियों के बारे में पूछते हैं। वहीं बच्चे भी पालकों को आजकल 'सर' बोलकर सम्बोधित करते हैं।

इस स्कूल में फिलहाल 118 बच्चे, 4 शिक्षाकर्मी और एक नियमित शिक्षक हैं। स्कूल के प्रधान अध्यापक नंदलाल निषाद का कहना है, ''पहले जो भी समस्या होती थी, उसे सुलझाना मुश्किल था, पर जब से शाला प्रबंधन कमेटियों का साथ मिला है, तब से हम सब मिलजुलकर हर चुनौती का सामना कर रहे हैं। शिक्षाकर्मियों के आंदोलन के दौरान जब बाकी स्कूलों में एक तरह से पढ़ाई बंद थी, उस वक्त भी हमारे स्कूल में पढ़ाई जारी रही, क्योंकि उस समय पढ़े-लिखे पालक और गाँव के शिक्षित युवक नियमित तौर पर स्कूल आकर बच्चों की क्लास ले रहे थे।''

शिक्षाकर्मियों के आंदोलन के दौरान जो पालक स्कूल आकर बच्चों की क्लास लेते रहे, उनमें से एक हैं डॉ. चित्तरंजन पटेल। उनका कहना है, ''हमारी शाला प्रबंधन कमेटी ने हम जैसे पालकों से पढ़ाने के काम में सहयोग देने को कहा। मेरी क्लीनिक दोपहर में बंद रहती है, सो मैं उस दौरान बच्चों को पढ़ाता था। इससे अब बच्चों और स्कूल के प्रति मेरा लगाव बढ़ गया है।''

पहले इस स्कूल में फुलवारी नहीं थी, अब पालकों की कोशिश से यह है और उसमें फूल भी खिल रहे हैं। छुट्टी के दौरान पालक इसकी पूरी देखभाल करते हैं। दशहरा और दिवाली की छुट्टी के समय शिक्षित पालक और कुछ शिक्षक स्कूल में जवाहर नवोदय विद्यालय में प्रवेश-परीक्षा के लिए बच्चों की तैयारी कराते रहे। आज यह स्कूल पूरे संकुल में चर्चा में है। यह एक मॉडल स्कूल बन गया है और आसपास के 13 स्कूलों में ऐसी ही शुरुआत हो चुकी है।

७ समुदाय के सहयोग और कृषि-फंड से स्कूल का विकास

अकसर देखा जाता है कि हमारे शासकीय स्कूल पैसे के अभाव के चलते अपनी छोटी-मोटी समस्याओं का भी समाधान नहीं कर पाते। लेकिन कुछ ऐसे स्कूल हैं, जो अपने कृषि-फंड के जरिये अपनी समस्याओं को सुलझाने के साथ-साथ गाँव के विकास में भी योगदान करते हैं। यह सब किसी शासकीय कार्यक्रम के तहत नहीं किया जाता है। यह शिक्षा के प्रति गाँव वालों के समर्पण, सहयोग और लगाव का नतीजा है। एक ऐसा ही स्कूल है छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के मगरलोड़ ब्लॉक के अरौद गाँव में।

प्राथमिक शाला, अरौद में गाँव के 63 बच्चे पढ़ते हैं। इनमें से 26 लड़कियाँ हैं। स्कूल में सरकार की ओर से नियुक्त प्रधान शिक्षक हैं कृष्ण कुमार साहू। यहाँ 2 शिक्षा-कर्मी और हैं। शाला प्रबंधन समिति ने अपनी ओर से एक शिक्षक को नियुक्त किया है। इस शिक्षक को 3,500 रुपया प्रति महीना मानद राशि प्रदान की जाती है।

''हमारे स्कूल के नाम 5 एकड़ उपजाऊ जमीन है। यह जमीन खेती के लिए लीज पर दे दी जाती है, जहाँ बोरवेल के सहारे इसमें 2 फसलें उगाई जाती हैं। पिछले साल इस जमीन की बंदोबस्ती से स्कूल के खाते में एक लाख 80 हजार रुपये आए। इस पैसे से हर साल स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस के समारोह आयोजित किए जाते हैं। पिछले साल इन दोनों राष्ट्रीय पर्वों पर 40,000 रुपये खर्च हुए। 8 हजार रुपये व्यय करके बच्चों को स्कूली बेल्ट दिया गया। गर्मी की छुट्टी में स्कूल के पौधे मर न जाएँ, इसलिए एक हजार खर्च करके एक माली की नियुक्ति की गई थी।'' यह कहना है स्कूल के प्रधान शिक्षक कृष्ण कुमार का। उन्होंने आगे कहा कि इस स्कूल में 5 साल पहले बिजली आई, वह भी कृषि-फंड से 30,000 रुपये खर्च करके। यही नहीं, 5-6 साल पहले स्कूल में कमरे की कमी को देखते हुए 4 लाख रुपये खर्च करके एक बड़ा-सा कमरा बनवाया गया। इस तरह यह स्कूल कई मायने में सरकार की सहायता का मोहताज नहीं रहा है।

यह कहानी सिर्फ अरौद स्कूल की नहीं है। छत्तीसगढ़ में और कई स्कूल हैं जिनके पास थोड़ी-बहुत कृषि-जमीन और कृषि-फंड है। दरअसल, बहुत पहले जब स्कूलों की स्थापना हुई, तब लोगों ने इनको दान में जमीनें भी दीं। कुछ जगह सार्वजनिक और गोचर जमीनों को पंच-सरपंचों की सहमति से स्कूलों से जोड़ दिया गया। हालाँकि सभी स्कूलों के पास जमीन नहीं है और न ही उससे इतनी आय होती है। जिनको जितनी भी आय होती है, उससे कई स्कूलों ने अपने परिसर की चहारदीवारी बनवाई, खेल-मैदान के लिए सामग्री ली। इस तरह छत्तीसगढ़ का यह प्रयोग स्कूल के विकास में सहायक बन रहा है और उन्हें स्वावलम्बी बना रहा है। गौरतलब है कि स्कूल के विकास के लिए सरकार की ओर से प्रति स्कूल पाँच हजार रुपये दिए जाते हैं।

शाला के विकास में शिक्षक और ग्रामीण साथ-साथ

८

छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के आदिवासी विकास-खंड नगरी में एक गाँव है डोंगरीपारा। यह गाँव धमतरी शहर से तकरीबन 15 किमी दूर है। यह एक आदिवासी-बहुल गाँव है। इस गाँव की प्राथमिक पाठशाला कई मायने में एक आदर्श प्रस्तुत करती है। एक पाठशाला कैसी होनी चाहिए, उसे कैसा दिखना चाहिए, उसके शिक्षक कैसे होने चाहिए, उसके निर्माण में बच्चों के पालकों की भूमिका क्या होनी चाहिए और, सबसे बढ़कर, वहाँ के बच्चे कैसे होने चाहिए - अगर यह सब देखना हो तो इस विद्यालय में एक बार जरूर आना चाहिए।

डोंगरीपारा गाँव में करीब 80-85 परिवार बसते हैं। इनमें से 70 परिवार आदिवासी हैं - 4-5 कमार आदिवासी हैं और बाकी सब गोंड़ आदिवासी। इस गाँव के मिट्टी के पारंपरिक कच्चे घरों के बीच-बीच में ईंट के पक्के मकान भी हैं। गाँव के

अंदर जाने के बाद आखिरी छोर पर यह प्राथमिक शाला है। इस स्कूल की हरियाली एक अलग तरह का अहसास दिलाती है। यहाँ फूल के छोटे-बड़े पौधे तो हैं ही, पीपल और बरगद जैसे पेड़ भी हैं। इसके अलावा यहाँ सब्जी की बहुत ही सुंदर बागवानी है। इसमें भाजी से लेकर बरबटी के पौधे तक मौजूद हैं। बरबटी के पौधे कुछ दिन आगे-पीछे लगाए गए हैं ताकि सब एक साथ खत्म न हो जाएँ। हमने देखा कि कुछ पौधों में अभी बरबटी फली है तो कुछ में अभी फूल भी नहीं आए हैं। स्कूल के मध्याह्न भोजन में इस सब्जी का ज्यादा समय तक उपयोग हो सकता है।

शाला सहभागिता समिति के उपाध्यक्ष भीखमराम मरकाम का कहना है, ''हमारा स्कूल आसपास के बाकी स्कूलों से अलग है। यहाँ जो है, दूसरे स्कूलों में नहीं है। यहाँ स्कूल का अहाता है, बोरवेल है, बागवानी है। यहाँ पढ़ाई भी अच्छी होती है। यह सब हमारे सर लोगों (शिक्षकों) का प्रभाव है।'' इस पर पास बैठे स्कूल के प्रधान शिक्षक सहदेवराम ध्रुव ने कहा, ''यहाँ आप जो भी देख रहे हैं, यह सब ग्रामीणों की सहभागिता का नतीजा है। गाँव वालों को जगाने और जनसहभागिता के माध्यम से शाला का विकास करने का श्रेय हमारे शिक्षक होरीलाल निषाद को जाता है। वे यहाँ मेरे आने से पहले आए हैं और यह प्रक्रिया शुरू की है, जो अब भी जारी है।''

होरीलाल निषाद सहायक शिक्षक हैं और 2008 से यहाँ पदस्थ हैं। उनका कहना है, ''मैं जब यहाँ आया, यहाँ शाला भवन के अलावा एक खाली मैदान था और सामने एक गड्ढा था गाय का गोबर डालने के लिए। मैं यहाँ ज्वाइन करने से पहले घूमने आया और पाया कि यहाँ के लोग बहुत अच्छे हैं और इनको लेकर कुछ अलग काम किया जा सकता है। उस दौरान डाइट, नगरी की ओर से 'गाँव हमारा, बच्चे हमारे और स्कूल हमारे' जैसे नारे को लेकर एक अभियान चला था। डाइट से आए लोगों ने यहाँ मीटिंग की थी। हम गाँव के लोगों से लगातार संपर्क और बैठक करते रहे। हमने उन्हें कुछ अच्छे स्कूल देखने के लिए प्रेरित भी किया। हम उन्हें शैक्षणिक भ्रमण पर मैनपुर और गहनासियार ले गए थे। गाँव वालों ने यह भ्रमण गाँव कमेटी के पैसे से किया था। इसमें डोंगरीपारा और बरबांधा के ग्रामीण शामिल थे । यही नहीं, गाँव वाले एक यात्रा से संतुष्ट नहीं हुए तो और एक बार यात्रा की, जिसमें बड़ी संख्या में महिलाएँ शामिल हुईं।''

शिक्षक होरीलाल ने आगे कहा, ''इन सब शालाओं को देखकर गाँव वाले काफी प्रभावित हुए और अपनी प्राथमिक शाला के विकास के लिए उत्साहित नजर आए। स्कूल के पास ही कई बड़े-बड़े पत्थर थे। गाँव वालों ने मिलकर उन्हें तोड़ा और श्रमदान करते हुए इस अहाते का निर्माण किया। इसमें आवश्यक धन का भी सहयोग मिला। गाँव वालों ने छेरछेरा नाच कर जो पैसा इकट्ठा किया था, वह सारा पैसा भी इसमें लगा दिया। उस पैसे से मोटर पम्प लगाया गया। इस काम में करीब 23 हजार रुपये खर्च हुए। इसके अलावा, गाँव वालों ने करीब 25 हजार रुपये खर्च कर प्रिंटर समेत एक कम्प्युटर खरीदकर दिया। इसका उपयोग ऑफिस के काम के लिए तो होता ही है, बच्चे भी इसका उपयोग करते हैं।''

होरी लाल यह भी कहते हैं, ''गाँव वाले आज भी स्कूल के नाम पर अन्नघट योजना चला रहे हैं। इसके अंतर्गत वे एक घड़े में रोज एक मुट्ठी चावल डालते हैं। इससे महीने में कम से कम एक किलो चावल और 10 रुपये एक-एक परिवार से आ जाता है, जिससे हर महीने 30-35 किलो चावल और दो-ढाई सौ रुपये जमा हो जाते हैं। इन पैसों से हम स्कूल में छोटे-मोटे काम (जैसे बागवानी के लिए पाइप खरीदना) करा लेते हैं। इस तरह गाँव वालों का सहयोग और भागीदारी बनी हुई है। स्कूल की बागवानी और सब्जी उगाने में गाँव वाले जरूरत के मुताबिक भरपूर सहयोग कर रहे हैं। जब स्कूल की छुट्टी होती है तो वही इसकी जिम्मेदारी लेते हैं और लगातार पौधों में पानी देते हैं। फिलहाल सफाई कर्मचारी जबसे है, वह इसका खयाल रखता है।'' प्रधान शिक्षक सहदेवराम कहते हैं, ''गाँव के एक दादाजी सुकराम मरकाम के पैर में जब फ्रैक्चर नहीं हुआ था, तब वे रोज सुबह-शाम शाला आते थे और बागवानी से लेकर किचन गार्डेन तक सबकी देखभाल करते थे।''

यह स्कूल आसपास के इलाके में एक और बात के लिए भी चर्चा में है। पिछले 6 सालों में यहाँ के 6 छात्र-छात्राओं का नवोदय विद्यालय के लिए चयन हो चुका है। सबसे सुखद बात यह है कि ये सभी बच्चे आदिवासी हैं। इन 6 बच्चों में से 4 लड़कियाँ हैं और 2 लड़के। उन 4 लड़कियों में से एक कमार आदिवासी है। यह निश्चित तौर पर एक अलग तरह की उपलब्धि है।

हमने स्कूल की चौथी और पाँचवीं कक्षा के बच्चों से बात की। उनका आत्मविश्वास और जज्बा काबिले-तारीफ है। चौथी कक्षा की कुसुम लता डॉक्टर बनना चाहती है

तो ऐश्वर्या मैडम (शिक्षक) बनना चाहती है। मनीष पुलिस बनना चाहता है और अनुराग फौजी। ये सभी बच्चे नवोदय स्कूल की प्रवेश-परीक्षा के लिए तैयारी भी कर रहे हैं। अभी दिवाली की छुट्टी में इस विद्यालय से नवोदय विद्यालय गए बच्चे आए थे। वे इन बच्चों की नवोदय प्रवेश-परीक्षा की तैयारी करवा रहे थे।

हमने एक कक्षा का अवलोकन किया। होरीलाल अपनी कक्षा में नापतौल के बारे में पढ़ा रहे थे। लीटर और मिलीलीटर क्या होता है, इसे बच्चों को समझाने के लिए वे कक्षा में लीटर मापने वाले बर्तन रखे हुए थे । वे बच्चों को प्रैक्टिकल करके बता रहे थे। इससे बच्चे बड़ी आसानी से लीटर से मापना सीख रहे थे।

इस प्राथमिक शाला में अभी 27 छात्र-छात्राएँ हैं - 13 लड़के और 14 लड़कियाँ। प्रधान शिक्षक सहदेवराम ध्रुव और सहायक शिक्षक होरीलाल निषाद - यहाँ दो शिक्षक हैं। ये दोनों ही शाला के विकास और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए प्रयासरत हैं।

जंगल के बीच एक स्कूल ९

गाँव का नाम है चंदनपुर। यह गाँव घने जंगल के बीच बसा है। 2011 की जनगणना के मुताबिक, इस गाँव की कुल आबादी है 95 और सभी ग्रामीण आपस में रिश्तेदार हैं। यह गाँव छत्तीसगढ़ में है और कमार आदिवासी-बहुल है। इस गाँव में एक प्राथमिक शाला है। इस गाँव में यह हमारा चौथा दौरा है। पहली बार जब हम यहाँ आए थे, तब इस स्कूल को देखकर एक बात का सुकून महसूस हुआ कि चलो, जंगलों के बीच रहने वाले इन कमार आदिवासियों के लिए एक कमरे का ही सही, एक स्कूल तो है, जहाँ इनके बच्चे पढ़ने आ रहे हैं। 3 साल पहले वहाँ न तब चहारदीवारी थी और न अब है। हाँ, अभी वहाँ एक शौचालय जरूर बन रहा है। इसलिए अभी भी बच्चे और शिक्षक जंगल में ही जाते हैं पेशाब करने के लिए।

अभी यहाँ 2 शिक्षक है - जितेंद्र कुमार ध्रुव और टेकराम साहू। जितेंद्र ध्रुव की यह पहली नियुक्ति है। ये यहाँ 2013 में आए। टेकराम पिछले साल शिक्षकों के युक्तियुक्तकरण के तहत आए ।

अभी गर्मी की छुट्टी के बाद जब स्कूल लगा तो शिक्षकों ने शाला कमेटी के सदस्यों और ग्रामीणों को भी आमंत्रित किया। इन्होंने उनसे स्कूल के बारे में बातचीत की। साथ ही, आने वाले दिनों में स्कूल में होने वाले कार्यक्रमों के बारे में भी चर्चा की। जब हम पहुँचे, तब तक ग्रामीण जा चुके थे। हम बच्चों से बातें करने लगे कि उन्होंने छुट्टियों में क्या किया। उनमें से ज्यादातर ने कहा, ''खेले।'' कइयों ने कहा, ''चूहा मारा, चिड़िया मारी।'' कमार आदिवासी चूहा और चिड़िया मार कर खाते हैं और बच्चे भी बचपन से इस काम में पारंगत होते हैं। वहीं ''क्या खाकर आए हो,'' यह पूछने पर एक बच्चे ने कहा, ''भात और गोहिया।''

जब हम पहली बार वह स्कूल गए थे, तब ठंड का मौसम था। बच्चे मध्याह्न भोजन खत्म करने के बाद स्कूल से सटे जंगल में धूप सेंक रहे थे। वहाँ उनसे खूब बातचीत हुई। दूसरी बार हम स्कूल खुलने के समय पहुँचे थे, तब गर्मी का दिन था और एक-दो बच्चे ही आए थे। शिक्षक जितेंद्र ध्रुव गाँव में बच्चों के घर की ओर निकल पड़े कि वे क्यों नहीं आए हैं। वे दूसरी कक्षा की एक छात्रा के घर गए तो पता चला कि वह महुआ बीनने गई है। हम उसे ढूँढते हुए महुआ के पेड़ के पास पहुँच गए। छात्रा ने कहा, ''मेरी नानी आज अपने गाँव गई हैं। उन्होंने कहा था कि आज मैं महुआ बीनने चली जाऊँ, इसलिए यहाँ आई हूँ।'' ऐसे ही ज्यादातर बच्चे महुआ बीनने चले गए थे।

अब तीसरी बार जब हम स्कूल आए हैं तो यह गर्मी की छुट्टी के बाद पहला दिन है। पहली कक्षा के बच्चे अभी-अभी भर्ती हुए हैं। सभी बच्चे एक ही कमरे में बैठे हैं, क्योंकि स्कूल में एक ही कमरा है। वे अलग-अलग ग्रुप में बैठे हैं और एम.जी.एम. एल. (मल्टी ग्रेड मल्टी लेवेल) के टूल्स पकड़कर आपस में कुछ चर्चा कर रहे हैं। इस स्कूल में हर साल 16 से 20 बच्चे पढ़ते हैं।

हमने शिक्षकों से चर्चा की - स्कूल के बारे में उनका नजरिया क्या है। उनकी नजर में क्या परेशानी है, यह जानना चाहा। इस पर शिक्षक जितेंद्र ध्रुव ने कहा, ''आप देख ही रहे हैं, स्कूल में बहुत सारी परेशानियाँ हैं। कुछ अब दूर हो रही हैं। मुख्य परेशानी है शौचालय की। शौचालय इस साल बन रहा है। दूसरी समस्या है अहाता की। वह भी अगर बन जाता तो यह स्कूल आकर्षक लगता और बहुत सारी परेशानियाँ लगभग दूर हो जातीं।''

''और पढ़ने लिखने के हिसाब से देखा जाए तो?''

''पढ़ने-लिखने के हिसाब से देखा जाए तो यह गाँव और स्कूल पिछड़ा हुआ है। पिछड़ी जनजातियों के बच्चे उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते। गाँव में पाँचवीं तक स्कूल है। आगे पढ़ने के लिए केरेगाँव जाना पड़ता है, जो यहाँ से 6 किमी दूर है, घने जंगलों के बीच से गुजरकर पैदल जाना-आना होता है। इससे बच्चों में नीरसता उत्पन्न हो जाती है। इसके आगे की पढ़ाई के लिए सही मार्गदर्शन और सुविधा नहीं मिल पाती। इन्हीं सब वजहों से यह गाँव-समाज पढ़ाई के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है।''

''पहले बहुत सारे टीचर यहाँ से त्यागपत्र देकर चले गए, पर आप लोग नहीं गए?''

''अब हमें यहाँ रहते हुए दो-दो तीन-तीन साल हो गए, हम लोग नहीं जाएँगे और जाएँगे भी तो प्रमोशन में जाएँगे। हम लोग क्या है कि इसी ब्लॉक और इसी जिले से हैं तो कहाँ जाएँगे!''

''क्या करने से पढ़ाई में बच्चों की रुचि होगी और वे पढ़ेंगे और आगे बढ़ेंगे?''

''हम लोग अपनी तरफ से अपने शिक्षण-कार्य में नवाचार कर रहे हैं। इसके चलते बच्चे अब आसानी से हमसे घुलमिल चुके हैं। अब वे अपनी बातें हमसे शेयर करने लगे हैं। पहले वे हमसे बात करने में झिझकते थे। हमारे मित्रवत व्यवहार के चलते

अब वे मित्रवत व्यवहार करने लगे हैं एवं पढ़ाई में रुचि लेने लगे हैं। अब वे हर कार्य बेहतर ढंग से कर पाएँगे, ऐसी हमें उम्मीद है। अब बच्चों में स्वच्छता के हिसाब से भी बहुत कुछ सुधार हुआ है। पहले मौसम के अनुरूप बच्चों में दाद-खाज खुजली होती थी। लेकिन अब समय-समय पर यहाँ आने वाले ए.एन.एम. और एम.पी.डब्लू. (स्वास्थ्य-कर्मी) से इन बच्चों का नियमित स्वास्थ्य परीक्षण कराने और दवाई मुहैया करवाने से चर्मरोगों और अन्य बीमारियों में कमी हुई है। उनमें स्वच्छता की भावना आयी है। अब बच्चे हाथ धोकर खाना खाने लगे हैं। यहाँ तक कि घरों में भी वे अब बिना साबुन से हाथ धोए खाना नहीं खाते हैं। इस तरह स्वच्छता की दिशा में हमें बहुत बड़ी कामयाबी मिली है। पहले वे बालों में न तेल लगाकर आते थे और न कंघी करके। इसके अलावा, बच्चे गंदे कपड़े पहनकर आते थे। हमने न केवल बच्चों को लगातार प्रेरित किया, बल्कि पालकों से भी संपर्क किया। नतीजतन पालकों में जागृति आई और उन्होंने साफ-सुथरा कपड़े पहनाकर बच्चों को भेजना शुरू किया। अब बच्चों में वे स्वच्छता देख पा रहे हैं।''

''आप जिस नवाचार की बात कर रहे हैं, वह क्या-क्या हैं?''

''पहले तो हमने स्वच्छता पर ही बहुत नवाचार किया । हमने हाथ धोने के लिए प्रेरित किया, उन्हें साबुन मुहैया कराया। बच्चों के कपड़े के बटन वगैरह टूटे हुए थे - हमने स्कूल में सुई-धागा और बटन भी मुहैया कराया। बच्चों को नेल-कटर देने के बावजूद उन्हें अपना नाखून काटने नहीं आता था। हमने उनकी उंगली पकड़कर उनके नाखून काटे हैं। इससे बच्चे अब धीरे-धीरे सीख रहे हैं नाखून काटना । अब बच्चे स्वयं बोलते हैं कि सर, नेल-कटर दीजिए, नाखून बड़े हो गए हैं।''

''शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने के लिए क्या कर रहे हैं?''

''गुणवत्ता-सुधार के लिए हम प्रतिदिन होम-वर्क करवाते हैं। बार-बार कहने के बावजूद बच्चे होम-वर्क करके नहीं आते हैं, इसलिए प्रार्थना के बाद हम उनका होम-वर्क करवाते हैं। बच्चे दातुन करके नहीं आते थे। प्रार्थना के बाद हमने अपने सामने नियमित रूप से उन्हें दातुन करवाया है। दातुन के बाद वे जीभ की सफाई नहीं करते थे। जीभ की सफाई कैसे करते हैं, हमने उन्हें सिखाया है। हम उन्हें दातुन करके आने के लिए बोलते थे, पर वे ऐसा करके नहीं आते थे, इसलिए हम उन्हें दातुन यहीं करवाते थे। हमने उन्हें पेस्ट खरीदकर दिए हैं। इससे इनकी

स्वच्छता में सुधार हो रहा है। यह जंगली इलाका है, हम बच्चों के शिक्षा-शिक्षण में इसका भरपूर उपयोग कर रहे हैं। हम उन्हें कक्षा से बाहर ले जाकर वातावरण के बारे में बताते हैं। स्थानीय पेड़ों-पक्षियों के बारे में उनकी जानकारी पुख्ता है। पर उन पेड़ों-पक्षियों के नाम वे अपनी स्थानीय भाषा में जानते हैं, जिन्हें हम पुस्तक की भाषा में उन्हें बताते हैं। वस्तुओं का प्रत्यक्ष अवलोकन जरूरी है। चींटी को अगर दिखाओगे और उसके बारे में जानकारी दोगे तो उसके बारे में बच्चा अपनी सही समझ बनाएगा। वह जानकारी दिमाग में स्थायी रहती है, वे उसे भूलते नहीं हैं। पर्यावरण में एक पाठ है - जड़ें। जड़ें 2 प्रकार की होती हैं - रेशेदार जड़ और मूसला जड़। आप जब तक बच्चे को पौधा उखाड़कर नहीं दिखाओगे और यह नहीं बताओगे कि कौन-सी जड़ रेशेदार है और कौन-सी जड़ मूसला है, तब तक सही समझ पाना मुश्किल है। ऐसे तो यहाँ के बच्चे जड़ी-बूटी के बारे में भी जानते हैं। उनके माँ-बाप जड़ी-बूटियों का उपयोग करते हैं, इसलिए बच्चे भी जड़ी-बूटी को पहचानते हैं थोड़ा-बहुत। जैसे, साँप काटने पर क्या करना है, कौन-सी जड़ी-बूटी का उपयोग करना है, यह सब वे जानते हैं।

''बच्चे नियमित आ रहे हैं?''

''हाँ, बच्चे नियमित आ रहे हैं। इसके लिए हमने पालकों से बहुत संपर्क किया। अगर कोई बच्चा नहीं आता है तो हम तुरंत उसके घर जाते हैं। उसी का लाभ मिला है हमें।''

''इस गाँव या स्कूल की अच्छाई क्या है?''

''यहाँ स्कूल की कोई भी जरूरत हो, गाँव वाले और पालक पूरा सहयोग करते हैं। कोई भी मीटिंग होती है तो सभी मौजूद रहते हैं। इससे हमें प्रोत्साहन मिलता है और यह महसूस होता है कि हमें इस समुदाय का समर्थन मिल रहा है। समुदाय के सहयोग के बिना आप कुछ नहीं कर सकते। शाला और समुदाय का गहरा संबंध है। इन लोगों को शाला से लगाव है। हमारे उद्देश्य की पूर्ति में शाला कमेटी और गाँव का पूरा समर्थन मिलता है। हम अब इन बच्चों की भाषा भी कुछ-कुछ सीखने लगे हैं। जब हम उसमें से कुछ शब्दों का प्रयोग करते हैं तो बच्चे काफी खुश होते हैं।''

''अब आपको अच्छा लग रहा है?''

''अब धीरे-धीरे अच्छा लगने लगा है। विकसित एरिया से पिछड़ी एरिया में आने पर थोड़ी मुश्किल तो होती है। यहाँ बारिश के दिनों में काफी कठिनाई होती है। उन दिनों नालों में पानी भर जाता है, 2 किमी दूर मोटर साइकिल छोड़ कर आना पड़ता है। पर अब धीरे-धीरे हम यहाँ रमने लगे हैं। यह स्कूल और गाँव हमें अच्छा लगने लगा है।''

शाला की इतिहास-पंजी के अनुसार, ''यह स्कूल गाँव वालों की बार-बार मांग के बाद 8 जून 2006 को चंदनपुर गाँव के ही एक ग्रामीण रतिराम कमार के घर में शुरू हुआ और छगन लाल विश्वकर्मा शिक्षक के बतौर नियुक्त हुए। उस साल पहली कक्षा में 7 बालिकाओं और 4 बालकों और दूसरी कक्षा में 3 बालिकाओं और 2 बालकों ने पढ़ाई शुरू की। इस प्रकार कुल 16 बच्चों से यह स्कूल शुरू हुआ। लेकिन दुख की बात है कि 2 महीने भी पूरे नहीं हुए थे कि शिक्षक छगन लाल इस्तीफा देकर चले गए। पिछले 8 सालों में इस स्कूल में 10 शिक्षक नियुक्त हुए, जिनमें से 5 शिक्षक इस्तीफा देकर चले गए।''

लेकिन अब इस स्कूल में 2 शिक्षकों के टिकने से इस गाँव के बुजुर्ग मायाराम की उम्मीदें जग गई हैं। उन्होंने कहा, ''यहाँ अब माध्यमिक शाला की जरूरत है क्योंकि यह एक तो जंगली इलाका है, दूसरे यहाँ बारिश में एक तरह से रास्ता बंद हो जाता है। इससे बच्चों का आना-जाना मुश्किल हो जाता है। अब प्रशासन और सरकार की बारी है कि वह इन बच्चों के लिए माध्यमिक शाला खोले और गाँव तक आने-जाने के लिए अच्छी सड़क मुहैया कराए।''

वे गुरुजी थे और आज भी हैं ! १०

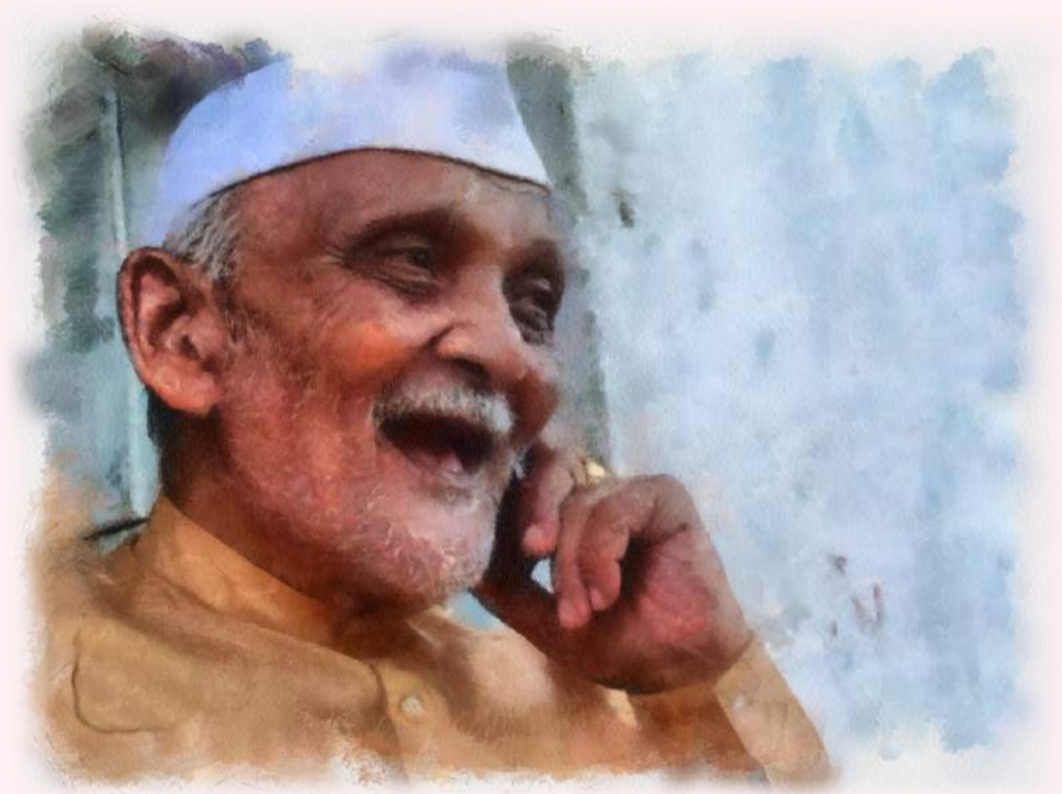

दाऊद खान रामायणी-यह नाम ही अपने-आप में बहुत कुछ कहता है। दाऊद खान रामचरितमानस यानि रामायण का पाठ करते हैं, इसलिए लोगबाग उन्हें दाऊद खान रामायणी के नाम से जानते हैं। उन्हें जानने वाले लोग उन्हें प्यार से गुरु जी कहकर पुकारते हैं। बच्चे उन्हें चॉकलेट वाले दादाजी के नाम से जानते हैं। उनके सामने से गुजरने वाले बच्चे हों या बड़े, वे सबको चाकलेट जरूर देते हैं। आज वे 93 साल की उम्र में भी फिट हैं और वे रोज प्रातः भ्रमण के लिए जरूर जाते हैं। गुरु जी आज अन्य कारणों से जितने लोकप्रिय हैं, वे एक शिक्षक के बतौर अपने समय में उतने ही लोकप्रिय थे।

''इस स्कूल के गेट के दोनों ओर गेंदा के फूल के पौधे होते थे। ऐसा लगता था, मानो आपको गार्ड ऑफ ऑनर दे रहे हों। यहाँ भरी-पूरी बागवानी थी, जिसमें भाँटा, मिर्च, धनिया, मेथी के अलावा कई फलदार वृक्ष भी थे। इसमें काजू भी था। यह सब दाऊद खान गुरुजी के प्रयास का नतीजा था।'' यह कहना है उनके साथ सहायक शिक्षक के रूप में काम कर चुके शिक्षक शिव प्रसाद सारवान का, जो अभी उसी लोहरसी की माध्यमिक शाला में शिक्षक हैं, जहाँ प्राथमिक शाला में दाऊद जी 1963 से 1983 तक 20 साल रहे। दोनों स्कूल एक ही अहाते में हैं।

दाऊद जी से इस संबंध में हमारी बात हुई। हमने जानना चाहा कि उन्होंने यह सब कैसे किया था? इस पर उनका जवाब था, ''यह सबसे महत्वपूर्ण है कि लोगों के साथ संबंध कैसा है। संबंध खराब होगा तो बना-बनाया काम बिगड़ जाएगा, संबंध अच्छा होगा तो बिगड़ा हुआ काम बन जाएगा। जब हम वहाँ पहुँचे तो वहाँ की पाठशाला एक इमारत भर थी। सबसे पहले मेरी आत्मा में आया कि इसकी चहारदीवारी होनी चाहिए। दो-ढाई एकड़ का प्लाट है। उसमें परकोटा बनाना है, 5 फीट-साढ़े 5 फीट ऊँचाई का। इसके लिए हमने रामायण का कार्यक्रम रखा। सबको मालूम था कि दाऊद खान गुरुजी आ रहे हैं, जो रामायण पढ़ते हैं। चार बार हमने रामायण का पाठ किया और कहा कि रामायण पढ़ने या सुनने से कुछ नहीं होगा, बल्कि रामायण जो कहती है वैसा आचरण बनाने से कुछ होगा। आपका स्कूल दो एकड़ के प्लाट में बना हुआ है। रात में गाय-बैल वहाँ घुसे रहते हैं, सुबह गोबर फेंकना पड़ता है। इसमें अगर परकोटा बन जाता तो बहुत अच्छी बात होती। भगवान राम ने जहाँ-जहाँ कुटिया बनाई, परकोटा बनाया। सीता, राम और लक्ष्मण तीनों ने मिलकर परकोटा बनाया है रामायण में। खाली राजा बनकर नहीं, सेवक बनकर गए थे राम। हमने उनको बताया, तो वहाँ मिस्त्री थे ईंट जोड़ने वाले, उन्होंने फ्री में ईंटें जोड़ीं। वहाँ ईंट बनाने वाले भी थे, उन्होंने फ्री में ईंटें दीं। हमें सीमेंट भी फ्री में मिली। बताओ, दो एकड़ की 6 फीट ऊँची दीवाल, अंदाज लगाओ कितनी ईंटें लगी होंगी? हमारा एक पैसा खर्च नहीं हुआ। अगर पैसा खर्च हुआ होता तो उस जमाने में भी कम से कम बीस हजार रुपये खर्च हुए होते। किंतु सारा काम सहयोग से फोकट में हो गया। सहयोग की परिभाषा समझानी नहीं पड़ी। आपस में अगर आदमी का प्रेम हो जाए, तो कठिन से कठिन कार्य सरल हो जाता है। जहाँ खींचतान हो, वहाँ सरल कार्य भी कठिन हो जाता है। यह प्रैक्टिकल करके लोग सीख गए।''

उसके पहले वह खरेंगा प्राथमिक शाला में भी पदस्थ थे। खरेंगा के अनुभव के बारे में उनका कहना है, ''खरेंगा में सबसे बड़ा काम हमने यह किया - महानदी का पानी धूपकाले में सूख जाता था। पानी के लिए वह गाँव तरसता था। हमने एक ही दिन में 10 फीट ऊँचा बालू का एक चेक डैम बनवा दिया, जिसके ऊपर एक फीट चौड़ा रास्ता था जिस पर लोग चल सकते थे। इस तरह 10 फीट ऊँचे डैम में 9 फीट पानी भरा था। बस्ती वालों के सामने बहुत बड़ा काम हुआ, जैसे जलाशय आ गया। जो बूँद-बूँद के लिए तरसते थे, नदी को खोद कर - जिसे झरिया बोलते हैं न! - उसका पानी डूब-डूब के पीते थे, वहाँ इतना पानी, खरेंगा से अछोटा तक लबालब पानी। यह सिर्फ एक दिन में तैयार हो गया। इसमें पूरी पब्लिक भीड़ गई, क्योंकि सबका स्वार्थ था, बूँद-बूँद के लिए सब तरसते थे जो! हमने उनसे कहा कि अगर पूरा गाँव दिन भर भीड़ गया, तो नदी में बाँध क्या, समुद्र बन सकता है।''

दाऊद खान यह भी कहते हैं, ''नदी को बाँधकर प्रैक्टिकल देखा उन्होंने कि सचमुच, जो गुरुजी ने कहा, वह सच है। इस तरह कोई भी चीज असंभव नहीं है। किसमें? संगठन में। किसमें? प्रेम में। मेरे पास 2 चीजें हैं, प्यार करता हूँ और लोगों को लोगों से जोड़ता हूँ। इन कामों के कारण ही 1972 में मुझे राष्ट्रपति पुरस्कार मिला। वी. वी. गिरि उस समय राष्ट्रपति थे। उन्होंने फर्स्ट क्लास की टिकिट भेजी और पूरा इंतजाम किया। मैं राष्ट्रपति भवन में आठ दिन मेहमान रहा। वहाँ राष्ट्रपति भवन में हमारा प्रवचन हुआ। राष्ट्रपति ने पूछा कि हम आपको पुरस्कार दे रहे हैं, आप क्या महसूस कर रहे हैं? हमने कहा-दाऊद खान जगत -पति से पुरस्कृत है और आज राष्ट्रपति से पुरस्कार ले रहा है।''

हम लोहरसी के उस स्कूल में गए थे। आज वहाँ न तो बागवानी है और न स्कूल का अहाता। पर उस अहाते के अवशेष आज भी कहीं-कहीं दिखाई दे रहे हैं। दाऊद गुरु जी ने उस दौरान स्कूल में कई पेड़ भी लगवाए थे, जिनमें से कई पेड़ बड़े और बूढ़े हो चुके हैं और जिंदा भी हैं। कई पेड़ अब नहीं हैं। उन्होंने गाँव वालों को उत्साहित कर लोगों के हाथों से पेड़ लगवाए थे। ''हरेक पेड़ में गाँव के सयानों का नाम चिपका दिए थे। इस पेड़ में इनका नाम लिखा है, उस पेड़ में उनका नाम है, उससे वे सब बहुत खुश थे। बेटा, प्यार बहुत असर करता है। ईमानदारी से काम करना है, पूछने की कोई जरूरत नहीं है, वह तो भीतर तक असर करता है। वह तो तब होगा, जब व्यवहार में परिवर्तन लाओगे। तभी उसका असर होगा।'' दाऊद गुरुजी कहते हैं।

वे केवल स्कूल को सजाने और सँवारने में समय व्यतीत नहीं करते थे, बल्कि शिक्षा पर भी ध्यान केन्द्रित करते थे। उनके सहयोगी शिव जी का कहना है, ‘‘दाऊद गुरुजी स्कूल में बहुत ही व्यस्त रहते थे। अध्यापन, बागवानी और बुनियादी शिक्षा पर ध्यान रखते थे। इन सबके साथ वह प्रधान अध्यापक होते हुए भी हर दिन तीन क्लास लेते थे।’’ दाऊद गुरुजी का गाँव वालों से कैसा संबंध था, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है - जब हमने उस समय के एक बुजुर्ग अमर सिंह साहू से पूछा तो उनका कहना था, ‘‘ओ गुरु जी के बारे में काला बताओं, ओखर कस गुरुजी तो संसार में नई ये।’’

शिक्षक और बच्चों का दोस्ताना रिश्ता ११

राजनाँदगाँव जिले में जो कुछ सबसे ज्यादा माओवादी प्रभावित इलाके माने जाते हैं, उनमें से एक है मोहला विकास-खंड। इस विकास-खंड में एक गाँव है माटकशा, जो कभी माओवादी प्रभावित गाँव माना जाता था। वहाँ की भौगोलिक स्थिति कुछ ऐसी है कि इस गाँव से आगे के लिए कोई रास्ता नहीं है। यह गाँव एक पहाड़ के पास जाकर खत्म हो जाता है। यह पहाड़ राजनाँदगाँव और बालोद जिले की सीमा पर है।

खैर, हम जिक्र करने जा रहे हैं इस गाँव के स्कूल के बारे में। यहाँ 2 स्कूल हैं, एक शासकीय प्राथमिक शाला और दूसरा शासकीय पूर्व माध्यमिक शाला। दोनों स्कूल अगल-बगल में ही हैं, ठीक वैसे जैसे स्कूल में बच्चे कक्षा में बैठते हैं। स्कूल गाँव के बीच में है। गाँव की नई बस्ती से स्कूल सटा हुआ है, जबकि पुरानी बस्ती थोड़ी दूर है। ''जब माध्यमिक स्कूल की नई बिल्डिंग बन रही थी, तब कुछ लोग

यह सुझाव दे रहे थे कि इसे गाँव से दूर, जो रास्ता गाँव को मुख्य सड़क से जोड़ता है, वहाँ बनाया जाए। तब मैंने सुझाव दिया कि नहीं, यह गाँव के बीच में और प्राथमिक शाला के पास ही बनाया जाए ताकि गाँव के लोग इधर से आते-जाते इन शालाओं पर एक नजर रख सकें। इसे गाँव वालों ने माना और ये दोनों स्कूल यहाँ बने।'' यह कहना है प्राथमिक शाला के प्रधान पाठक अनिल कुमार रामटेके का।

उनका मानना है कि शिक्षा के विकास में शाला, समुदाय, शिक्षक और बच्चों का साथ रहना और सतत संपर्क में रहना बहुत जरूरी है, जिससे कई काम आसान हो जाते हैं। हमने देखा कि यह स्कूल एक कैम्पस में है-बाँस का अहाता है जिसे गाँव वालों ने मिलकर खुद बनाया है। उन्होंने जंगल से कंधे और सर पर बाँस लाकर इस अहाते का निर्माण कराया है। उस कैम्पस के अंदर फूल के पौधों के साथ-साथ फल के कुछ पेड़ भी लगाए गए हैं। ''1914 में हम हॉर्टिकल्चर नर्सरी से तकरीबन एक हजार फलों के पौधे लाए थे। हमने गाँव वालों के सहयोग से गाँव की सड़क के दोनों ओर पौधा-रोपण किया है। इसकी देखरेख स्कूल के बच्चे और गाँव वाले मिलकर कर रहे हैं। स्कूल के सामने एक ट्यूबवेल है और अब एक बोरिंग पम्प भी है जिससे पानी निकाला जाता है। लेकिन अभी तक पानी की सप्लाई शौचालय आदि में नहीं की जा सकी है। बच्चों की आवश्यकतानुसार शौचालय भी है। हम पाइप फिटिंग के लिए स्थानीय विधायक और सरकार को भी लिख चुके हैं।'' यह कहना है रामटेके जी का।

इस स्कूल में कुल 2 शिक्षक हैं और 22 छात्र-छात्राएँ हैं। तकरीबन 250 की आबादी वाले इस गाँव में करीब 50 घर हैं, जिनमें 35 घर गोंड आदिवासी हैं, करीब 12-13 घर हलवा आदिवासी हैं और एक घर साहू और एक घर लोहार हैं। गाँव के पुराने लोगों में पढ़े-लिखे लोगों की तादाद नहीं के बराबर है। गाँव के पटेल नरसुराम का कहना है, ''उस समय शिक्षक इतनी पिटाई करते थे कि मार के डर से ही मैंने स्कूल छोड़ दिया।'' गाँव में आंगनवाड़ी-कर्मी बनने की योग्यता नहीं होने की वजह से दूसरे गाँव से आकर एक साहू परिवार बसा। इस परिवार की एक महिला आंगनवाड़ी का काम कर रही है।

स्कूल के प्रधान पाठक रामटेके जी का कहना है, ''इस गाँव में 1981 में स्कूल खोला गया। पहले गाँव के घरों में स्कूल चलता था। बाद में एक खपरैल की बिल्डिंग बनाई गई थी। 2 साल पहले यह स्कूल नई बिल्डिंग में स्थानांतरित हुआ।

यहाँ 2 कमरे हैं, एक परछी और एक प्रधान पाठक का कक्ष है।'' प्रधान पाठक रामटेके 1998 से इस स्कूल में हैं। शंकर लाल साहू यहाँ 2009 से शिक्षक हैं।

इस स्कूल में प्रधान शिक्षक ने अपने पैसे खर्च करके सभी कक्षाओं में कई फोटो टँगवाए हैं। इन चित्रों में भीमराव अंबेडकर, सुभाषचन्द्र बोस, भारतमाता, भगवान बुद्ध, भगत सिंह, महात्मा गाँधी, रानी लक्ष्मीबाई, राजीव गाँधी, छत्रपति शिवाजी, इन्दिरा गाँधी, चंद्रशेखर आजाद, जवाहरलाल नेहरु, देवी सरस्वती, आदि विराजमान दिखे। प्रधान पाठक का कहना है कि इस स्कूल को समुदाय और पालकों का अच्छा सहयोग मिलता रहा है।

इन सबसे ज्यादा मुझे जिस बात ने आकर्षित किया, वह हैं स्कूल के बच्चे। इतने अंदरूनी गाँव के बच्चे होने के बावजूद उनमें झिझक नहीं है। जब उनसे बातचीत हो रही थी तो वे बड़े सहज भाव से जवाब दे रहे थे। उनमें से कई बच्चे शिक्षक और फौजी अफसर बनना चाहते हैं। एक लड़की ने कहा कि वह कलेक्टर बनना चाहती है। हमने स्कूल की 5 वीं कक्षा का अवलोकन किया, जिसमें 6 बच्चे हैं। सभी बच्चे प्रधान पाठक की टेबुल को चारों ओर से घेर कर खड़े थे। वे प्लास्टिक के कंकाल को टेबुल के ऊपर रखकर बच्चों को पढ़ा रहे थे और सवाल-जवाब कर

रहे थे। किसे क्या कहते हैं, किस हड्डी का काम क्या है, वे यह बता रहे थे। वे बता रहे थे कि कंधे और हाथ के बीच की हड्डी कैसे कब्जे की तरह काम करती है। फिर उन्होंने कुछ बच्चों से कहा कि वे दरवाजे के पास जाएँ, कब्जा दिखाएँ और वह कैसे काम करता है, दिखाएँ। वह देखने के बाद उन्होंने उस प्लास्टिक के कंकाल के कंधे को हिलाया, जो पूरा हिलता था। तब उन्होंने बच्चों से कहा कि वे अपने-अपने कंधे, हाथ, पैर आदि हिलाएँ, घुमाएँ, देखें और महसूस करें कि हड्डियाँ कैसे काम कर रही हैं। बच्चे बहुत ही मजे के साथ, पर गंभीरता से यह सब करते हुए यह पाठ पढ़ते नजर आए। शिक्षक और बच्चों में दोस्ताना संबंध देखा गया। यहाँ तक कि आंगनवाड़ी के बच्चे भी यहाँ खेलते देखे गए।

इस स्कूल को देखकर निश्चित तौर पर अच्छा लगा। यह भी खयाल आया कि अगर सरकार इस स्कूल और शिक्षकों की समस्याओं के प्रति थोड़ा और संवेदन-शील होती तो और भी अच्छे परिणाम दिखाई देते। इस सबके बावजूद, प्रधान पाठक यह कहते हैं कि वे इस गाँव में बदलाव देखना चाहते हैं, इसलिए वे इस स्कूल को छोड़ना नहीं चाहते। गौरतलब है कि उनके पढ़ाए बच्चों में से अब 8-10 लड़के-लड़कियाँ कॉलेज जाने लगे हैं।

बच्चों ने सँजोए हैं सपने! १२

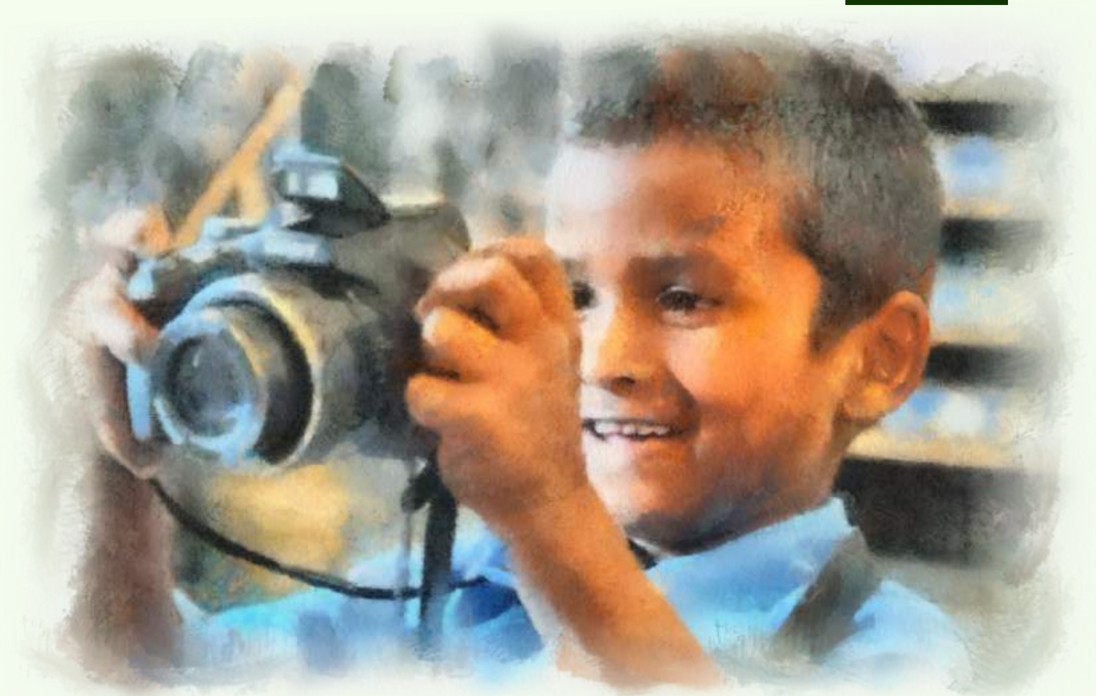

धमतरी जिले का नगरी क्षेत्र जितना पिछड़ा है, उसके विपरीत धमतरी से नगरी जाने वाली सड़क उतनी ही बढ़िया है। सड़क चौड़ी है। जंगलों और गाँवों के बीच से गुजरता यह रास्ता उतना ही मजेदार है। इस रास्ते में भीड़भाड़ कम है, इसलिए बाइक से जाने का अपना एक अलग मजा है।

आज हम जिस स्कूल के लिए निकल रहे थे, वह स्कूल जंगली इलाके में बसे एक गाँव में स्थित है। इस गाँव को अभी राजस्व ग्राम की मान्यता मिलने वाली है। वहाँ हम एक हफ्ते पहले गए थे। उस बार हम गट्टासिल्ली के जंगल वाले रास्ते से गए थे, इसलिए आज हमने यह दूसरा रास्ता चुना। हम दोपहर के समय जा रहे थे, इसलिए यदि पिछले वाले रास्ते से जाते तो शायद ही हम समय से पहुँच पाते, सो अच्छी सड़क पर रफ्तार के साथ निकल पड़े।

अभी एक हफ्ते पहले जब हम नीरज के साथ उस रास्ते से गुजर रहे थे, तब सराइटोला गाँव के पहले यह छोटा-सा स्कूल न जाने क्यों हमें एकाएक आकर्षित करने लगा। बाँस से बनी स्कूल की चहारदीवारी टूटी हुई थी। स्कूल के सामने बाँस का बना एक मंडप पुराना और टूटा हुआ नजर आ रहा था। हम मोटर-साइकिल खड़ी करके अंदर गए। साढ़े चार बजे से कुछ ज्यादा समय हो चुका था। बच्चे जा चुके थे। पर ऑफिस में एक सर बैठकर रजिस्टर में लिखने में व्यस्त थे। जब हम पहुँचे तो आपस में दुआ-सलाम हुई। पता चला कि आज पास के गाँव में मड़ेई है (इस क्षेत्र में धान-कटाई के बाद अलग-अलग गाँव में मेला लगता है, जहाँ आसपास के देवी-देवता इकट्ठा होते हैं और वहाँ दुकान-बाजार सजते हैं), इसलिए बच्चे और हमारे प्रधान पाठक भी जो इसी गाँव के हैं, मेला देखने के लिए थोड़ी देर पहले छुट्टी लेकर चले गए हैं।

हमने उनसे इस सराइटोला प्राथमिक शाला के बारे में पूछा कि इस स्कूल की अच्छी बातें क्या हैं? इस पर स्कूल में मौजूद सहायक शिक्षक (शिक्षाकर्मी) संजय पटेल ने कहा, ''बच्चों में काफी परिवर्तन हुआ है। पहले बच्चे डरपोक हुआ करते थे, बोल नहीं पाते थे, पर अब ऐसा नहीं है।''

''ऐसा कैसे संभव हुआ?'' जब हमने पूछा तो उनका कहना था, ''जब 2009 में मैं आया, तब पालक भी स्कूल नहीं आते थे। पर जब हमने उनसे गाँव में घर-घर जाकर संपर्क किया, उनसे लगातार बात की, बच्चों से अलग से बात की तो शिक्षक, पालक और बच्चों के बीच एक रिश्ता कायम हुआ। सबसे अहम बात यह है कि पहले शायद भाषा भी एक समस्या थी। जब हमने उनसे छत्तीसगढ़ी में बात की तो बात आसान हो गई। जंगली इलाका है, इसलिए लोग बाहरी दुनिया से भी कटे हुए हैं। पहले वे बच्चों को पढ़ने के लिए बाहर भेजना नहीं चाहते थे। कहते थे कि हम गोंड़ गँवार हैं। लेकिन अब समझने लगे हैं। हमने कोशिश की और अब 2 बच्चे बाहर के हॉस्टल में दाखिला लिए हुए हैं।''

गोंड़ आदिवासी-बहुल इस गाँव में 60-64 घर हैं। आबादी 300 से कुछ ज्यादा होगी। जंगली इलाका है तो लोग खेती - किसानी के साथ-साथ लघुवनोपज का संग्रहण भी करते हैं। पटेल सर का कहना है, ''यहाँ सब के पास बीपीएल (गरीबी रेखा के नीचे जीवन बसर करने वालों के लिए दिया जाने वाला राशन कार्ड) कार्ड है। जाहिर है, यह गरीबों का गाँव है।''

''स्कूल में कमी क्या है?''

''हैंड पम्प है, पर उससे थोड़ा लाल रंग का पानी निकलता है। स्कूल में शौचालय और चहारदीवारी नहीं है। हम चारों तरफ फूल के पौधे लगाए थे, पर अब वे नहीं हैं। ऐसे गाँव वाले हर साल बाँस से बाड़ा बना देते थे, पर इस बार यह खबर आई कि पक्की चहारदीवारी बनने वाली है तो उन लोगों ने भी यह नहीं किया।'' शिक्षक ने कहा।

1995 में स्थापित इस स्कूल में कुल 37 बच्चे हैं, जिनमें 19 बालक और 18 बालिकाएँ हैं। 2 बच्चे पिछड़ा वर्ग से हैं, जबकि बाकी सब आदिवासी हैं। स्कूल में प्रधान पाठक को मिलाकर 3 शिक्षकों की पदस्थापना है, पर अभी 2 ही शिक्षक हैं। एक शिक्षक को एक नए खोले गए स्कूल की व्यवस्था में भेज दिया गया है।

हम उस रोज गाँव भी गए थे। हमने कुछ पालकों से बात की थी, जिनमें से एक घासीराम नेताम हैं। उनके तीन बच्चे हैं, जिनमें से एक बच्चा सूर्यदेव 5 वीं कक्षा में और गगन दूसरी कक्षा में पढ़ता है। बेटी चाँदनी अभी आंगनवाड़ी जाती है। हमारी मुलाकात गगनदेव मरकाम से भी हुई। उनके दोनों बच्चों में से एक माध्यमिक शाला में है, जबकि दूसरा पढ़ाई छोड़ चुका है। ''पटेल सर जब से आए हैं स्कूल अच्छा हुआ है। उनका अलग प्रभाव है। पटेल सर से उम्मीद ज्यादा है। उनका तबादला नहीं होना चाहिए।'' ऐसा घासीराम नेताम ने कहा।

उस रोज स्कूल में बच्चों से मुलाकात नहीं हुई थी। सो आज हम दोबारा उस स्कूल जा रहे हैं। उस दिन की मुलाकात और बातों को याद करते-करते हम उस तिराहे पर पहुँच गए, जहाँ हमें मुख्य सड़क को छोड़कर दूसरा रास्ता पकड़ना था। यह रास्ता उस स्कूल की ओर जाता है, जहाँ हम जा रहे थे और उसकी दूरी यहाँ से करीब 3 किमी होगी। हमें उस तिकोने में दो झोपड़ीनुमा होटल दिखाई दिए। चाय की तलब तो कब से हो रही थी, सो हमने चाय माँगी। लाल चाय मिली, हम पीकर गाँव की ओर निकल पड़े। पता नहीं कब पक्की सड़क बनी थी। अब इसके परखच्चे उड़ चुके हैं। हम करीब साढ़े 3 बजे स्कूल पहुँच चुके थे। अंदर जाकर देखा तो पटेल सर चौथी और पाँचवीं कक्षा एक साथ और प्रधान पाठक हीरामन सिंह नेताम दूसरी और तीसरी कक्षा एक साथ ले रहे थे। पहली कक्षा के बच्चे बिना शिक्षक के अपनी क्लास में स्लेट और किताबों के बीच कुछ टास्क करते नजर आए।

सर से इजाजत के बाद मैं पहली कक्षा के बच्चों से बात करने गया तो उन्होंने बाकायदा खड़ा होकर 'गुड आफ्टरनून' कहते हुए अभिवादन किया और बैठने के लिए इशारा करने पर 'थैंक यू, सर' कहा। सब जमीन पर बैठे थे, सो मैं भी बैठ गया। बच्चे सहज होकर बात कर रहे थे। मैं जो पूछता था, वे उसका जवाब भी दे रहे थे। उनकी इस सहजता ने मेरा मन मोह लिया। जब मैंने पूछा कि हमारे राज्य का नाम क्या है तो जवाब आया 'भारत'। पर तुरंत उन्हीं में से किसी ने सुधारते हुए कहा, 'छत्तीसगढ़!' 'देश का नाम?' - 'भारत!' 'मुख्यमंत्री का नाम?' - 'रमन सिंह!' सभी ने कहा। मैं इस अंदरूनी गाँव के स्कूल की पहली कक्षा के बच्चों के इस सामान्य ज्ञान पर आश्चर्यचकित था। लगा कि इसके आगे सवाल करके उसका जवाब ढूँढना ज्यादती होगी। फिर मैंने उनके लक्ष्य के बारे में पूछा और आत्मविश्वास से भरे सबके जवाब ने मुझे गद्‌गद कर दिया। इस क्षेत्र की ज्यादातर लड़कियों की तरह उनकी क्लास की दोनों लड़कियों - अंजलि और निखिलेश्वरी - ने कहा कि वे मैडम (टीचर) बनना चाहती हैं। शरद ने डॉक्टर, दुर्गेश ने मास्टर और इसी तरह बाकी 3 बच्चों ने भी अपने-अपने लक्ष्य बताए।

जब मैं इस क्लास में बात कर रहा था, तब हमारे साथी लियान चौथी और पाँचवीं की संयुक्त कक्षा के बच्चों के साथ उनके किसी विषय पर चर्चा कर रहे थे। जब मैंने उनसे पूछा कि बच्चे कैसे हैं तो उनका कहना था, ''छात्र-छात्राएँ बहुत जिज्ञासु हैं और अकादमिक तौर पर भी अच्छे हैं। इस क्लास के बच्चे बड़ा होकर टीचर, डॉक्टर, किसान बनने के साथ-साथ इंजीनियर बनना चाहते हैं।''

जब हमने दूसरी और तीसरी कक्षा के बच्चों से पूछा कि तुम लोगों को स्कूल और घर में से क्या अच्छा लगता है, तो बच्चों ने कहा ''दोनों।'' उनका तर्क था, ''स्कूल में पढ़ने-लिखने का कौशल विकसित होता है और ज्ञान की बातें मिलती हैं, जबकि घर में हम रहते हैं, खाना बनाते हैं, खाते हैं और सोते हैं।''

हमने प्रधान पाठक नेताम जी और शिक्षक संजय पटेल से पूछा कि आप इन बच्चों को कैसा देखना चाहते हैं? इस पर उनका कहना था, ''बच्चों का अच्छा विकास हो और वे अच्छा नागरिक बनें, हम यही देखना चाहते हैं।''

साढ़े चार बजे स्कूल की छुट्टी हो गई। बच्चे अपने गाँव की ओर चल पड़े और हम गाँव से निकल पड़े। हम बस यही सोचते रहे कि इन स्कूलों और बच्चों को थोड़ी और मदद दी जाती तो शिक्षा के परिदृश्य में शायद और भी बदलाव आता। जो भी हो, यह एक ऐसा स्कूल है जहाँ कमियाँ तो बहुत हैं, इसके बावजूद यहाँ के होनहार बच्चों और समर्पित शिक्षकों से मिलना बहुत ही सुकून देता है।

समाज और संस्कृति से जुड़ी शाला १३

"2009 में जब मेरा प्रमोशन हुआ, यहाँ से मेरा ट्रान्सफर हो गया। मैं नए गाँव में पदस्थ होकर काम भी करने लगा। एक माह गुजर गया, तब मेरे पुराने गाँव वालों को लगा कि हमें वही शिक्षक चाहिए। गाँव वाले जिला अधिकारी के पास गए और कहा कि हमारे शिक्षक को वापस करो। उन्होंने न केवल मुझे पुराने स्कूल में पदस्थ किया, बल्कि उस पोस्ट का अनुमोदन किया जो यहाँ नहीं था। जब मैं वापस गाँव आया, तब गाँव वालों ने जुलूस निकालकर पटाखा फोड़ते हुए गुलाल लगाकर मेरा जोरदार स्वागत किया। तब मुझे लगा कि हाँ, मैं सही दिशा में काम कर रहा हूँ, और मैं मानता हूँ कि वह मेरे जीवन का अलौकिक क्षण था।" यह कहना है उस शिक्षक का जो पिछले 30 साल से एक ही गाँव में पदस्थ हैं और जब भी उनका कहीं और तबादला हुआ तो गाँव वालों ने वह तबादला रुकवा दिया।

हम बात कर रहे हैं राजनाँदगाँव जिले के छुईखदान विकास-खंड स्थित गोकना गाँव के शासकीय पूर्व माध्यमिक शाला के प्रधान पाठक पीसी लाल यादव के बारे में, जो अपने सेवा-काल के दो-तीन साल को छोड़कर बाकी समय इसी गोकना गाँव में पढ़ाते रहे। यह घटना तब की है जब वे गाँव के प्राथमिक शाला में पदस्थ थे। यादव जी को सेवा से अवकाश लेने में अभी सिर्फ 2 साल ही बचे हैं, पर एक सक्रिय शिक्षक में पाए जाने वाला वह जोश-खरोश उनमें अभी बरकरार है।

''यादव सर में सुबह से शाम तक गजब की एनर्जी रहती है। हम युवा हैं, पर हममें वह बात नहीं है। वे समय के पाबंद हैं। यादव सर पहले हर दिन 5 पीरियड पढ़ाते थे, पर हम लोगों ने अब सिर्फ 3 पीरियड पढ़ाने का अनुरोध किया है, क्योंकि प्रधान पाठक होने के नाते उनकी और भी कई जिम्मेदारियाँ है, इसलिए उन्हें समय चाहिए।'' यह कहना है उनके युवा सहायक शिक्षक निरंजन लाल साहू का।

गोकना की आबादी तकरीबन 1300 है। यह पूरी तरह से एक छत्तीसगढ़ी गाँव है, जहाँ आप छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक धरोहर का नजारा आज भी बखूबी देख सकते हैं- चाहे वह मिट्टी का घर हो या वेश-भूषा या तीज-त्यौहार और लोकनृत्य - सब में उसकी अमिट छाप दिखाई देती है। इस गाँव में साहू, मरार, सतनामी, श्रीवास्तव और यादव हैं। ज्यादातर ग्रामीण किसान हैं।

पीसी लाल यादव का कहना है, ''30 साल पहले जब मैं यहाँ आया तब यहाँ सिर्फ प्राथमिक शाला थी। गाँव में शिक्षा को लेकर जागृति नहीं थी। बहुत सारे बच्चे स्कूल नहीं आते थे। मैं घर-घर जाकर लोगों को समझा-बुझाकर बच्चों को स्कूल लाया। इसका नतीजा यह हुआ कि दूसरे सत्र में ही स्कूल में बच्चों की संख्या दोगुनी हो गई।'' फिर यादव जी साक्षरता अभियान के कला-जत्था से जुड़े। उनके इस काम के चलते गोकना गाँव 1998 में पूर्ण साक्षर गाँव घोषित किया गया।

यादव जी का शुरू से सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ लगाव रहा है। इसका असर स्कूल में भी साफ दिखाई देता है। शाला के शैक्षिक कैलेण्डर में ग्राम शिक्षा सभा के अनुमोदन के साथ भोजली त्यौहार, गेड़ी दौड़ प्रतियोगिता और फुगड़ी प्रतियोगिता आदि शामिल है। भोजली त्यौहार के समय स्कूल की लड़कियों को 4 ग्रुप में बाँटकर प्रतियोगिता कराई जाती है। ''भोजली त्यौहार भाईचारे का त्यौहार है। इन सब सांस्कृतिक गतिविधियों के जरिये बच्चों को सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन से परिचय कराया जाता है। इसके माध्यम से बच्चे सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन की अनमोल सीख सीखते हैं,'' ऐसा कहना है यादव जी का। यही नहीं, श्री यादव ने अपने गृह-ग्राम गंडेई में 'दूध मोंगरा' नामक एक सांस्कृतिक मंडली भी बनाई है। इसके माध्यम से वे छत्तीसगढ़ की लोक-कला और संस्कृति का संरक्षण और संवर्धन भी कर रहे हैं। यह मंडली उन्हें एक अलग पहचान दे रही है और उन्हें समाज में सहज स्वीकार्य बनाया है।

इसके अलावा, वे बच्चों की क्षमता-वर्धन के लिए प्रति माह बालसभा के अंतर्गत 'पहुना कार्यक्रम' का आयोजन करते हैं। इसमें वे किसी अतिथि को आमंत्रित करके बच्चों से मिलवाते हैं। ''आसपास के बाकी गाँवों की बनिस्बत यहाँ के ज्यादा बच्चे शिक्षाकर्मी, ग्राम-सचिव और पुलिस आदि शासकीय सेवा में हैं। हम आसपास उपलब्ध शासकीय अधिकारी, कलाकार आदि को बुलाते हैं, उन्हें बच्चों से मिलवाते हैं और उनसे बातचीत करवाते हैं ताकि यहाँ के बच्चे शिक्षक और पुलिस से आगे की भी सोच पाएँ।''

माध्यमिक शाला में फिलहाल 81 बच्चे हैं - 37 लड़के और 44 लड़कियाँ। स्कूल में चहारदीवारी नहीं है। यहाँ पेड़-पौधे रोपने के कई प्रयास हुए, मगर गाँव के मवेशी उन्हें हजम कर गए। चहारदीवारी की कमी स्कूल के सभी शिक्षकों और बच्चों को खलती है। लेकिन दूसरी ओर, स्कूल के पीछे किसी ग्रामीण की बहुत बड़ी आम

बोरई है। स्कूल के बच्चे और शिक्षक इसका भरपूर फायदा लेते हैं। वहाँ बच्चे स्कूल आने के बाद प्रार्थना करते हैं। इसके अलावा, वे दोपहर में खेलते हैं और शाम को रूटीन के अनुसार डांस वगैरह भी करते हैं। स्कूल में बच्चों के बैठने के लिए टेबुल-चौकी नहीं है। एक क्लास में सिर्फ लड़के ऊपर बैठे थे, जबकि लड़कियाँ नीचे बैठी थीं। पूछने पर कहा गया कि इतने चौकी-टेबुल नहीं हैं जितने बच्चे हैं और ये लड़कियाँ खुद अपनी मर्जी से नीचे बैठी हैं, हालाँकि यह देखकर कुछ अजीब-सा लगा। स्कूल में लड़कियों और लड़कों के लिए अलग-अलग और विशेष बच्चों के लिए भी अलग से शौचालय की व्यवस्था है। स्कूल में बिजली और पंखा तो है ही, यहाँ सांसद के मद से 2 कम्प्युटर हैं। इनमें से फिलहाल एक कम्प्युटर खराब है। यहाँ जन-सहयोग से नल में मोटर फिटिंग है, जिससे शौचालय की सफाई और हाथ धोने आदि के लिए पानी उपलब्ध हो जाता है।

इस स्कूल में प्रधान पाठक यादव जी के अलावा तीन शिक्षक और हैं - रामनाथ मरकाम, अश्विनी धुर्वे और निरंजन साहू। स्टाफ के सभी सदस्य एक-दूसरे को काफी सहयोग और समर्थन करते हैं। प्रधान पाठक यादव जी समेत रामनाथ मरकाम और अश्विनी धुर्वे अपने-अपने घर से पहली बार सरकारी नौकरी में आए हैं, इसलिए ये शिक्षा की कीमत जानते हैं और बच्चों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को बखूबी समझते हैं।

पीसी लाल यादव अभी माध्यमिक शाला में पदस्थ हैं, पहले वे प्राथमिक शाला में पदस्थ थे। वे हमें उस प्राथमिक शाला ले गए। वहाँ जन-सहयोग और पंचायत की सहायता से कई काम किए गए हैं। ज्यादातर काम यादव जी के समय हुआ था - यह जानकारी वहाँ के प्रधान पाठक ने दी और उन्होंने हमें अभी हो रहे कामों के बारे में भी सूचित किया।

स्कूल में कुछ समस्याएँ भी हैं, जिनमें से जगह की कमी भी एक है। इसके बावजूद, उस स्कूल और उनमें हुए विकास-कार्य को देखते हुए यह एहसास होता है कि वहाँ काम अच्छा हुआ है। जब हमने बच्चों से बात की तो यह विश्वास पुख्ता हुआ कि एक अच्छा शिक्षक और प्रेरित टीम स्कूल में क्या बदलाव ला सकते हैं।

यदि शिक्षक अच्छे हों तो..... १४

''कोई भी काम जरा हट के करना चाहता हूँ'' - विजय साहू की यह हठ और उनके काम करने का अंदाज उनके हर काम में झलकता है। विजय साहू छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के आदिवासी-बहुल विकास-खंड नगरी के नवागाँव स्थित माध्यमिक विद्यालय में शिक्षक के रूप में कार्यरत हैं। वे जिस स्कूल में भी जाते हैं, वहाँ अपने काम की छाप छोड़ जाते हैं।

इससे पहले वे पड़ोसी गाँव गहना-सियार के आदर्श प्राथमिक शाला में पदस्थ थे - जहाँ स्कूल छोटा, पर उसका संसार बड़ा दिखाई देता है। जंगल से सटे इस स्कूल के आँगन में बगीचा है। वहीं बच्चों के साथ बैठक के लिए सीमेंट की बेंचें बनी हुई हैं। ''यह सब आपने करवाया है?'' इस सवाल पर उनका जवाब है, ''नहीं, यह सब गाँव वालों के सौजन्य से हुआ है। गाँव वालों, और खासकर पालकों, का बहुत सहयोग रहा है। गाँव वालों और स्कूल प्रबंधन कमेटी के सदस्यों के सहयोग से

स्कूल में बिजली है और कम्प्युटर भी लगा है। गाँव वालों के सहयोग से ही स्कूल का इतना सुंदर कैम्पस बना है। उन्होंने सीमेंट की वह गोलाई वाली बैठक बनाने के अलावा गर्मी की छुट्टी के दौरान पेड़-पौधों में पानी भी दिया है। छोटे बच्चों के लिए टेबुल बनवाई है। इस तरह से स्कूल के लिए ग्रामीण हर संभव अपना सहयोग देते रहे हैं।'' विजय साहू इस स्कूल में करीब ढाई साल रहे हैं। वहीं स्कूल के अंदर जाते ही नजारा और भी आकर्षक लगने लगता है। दीवारों पर पोस्टर और मानचित्र के अलावा क्लास-रूम के चारों ओर दीवार से सटाकर करीब ड़ेढ फुट ऊँचा और आधा फुट चौड़ा चबूतरा बनाया गया है। उस चबूतरे पर गणित से लेकर सामाजिक विज्ञान और विज्ञान को प्रायोगिक तौर पर समझाने के लिए कई तरह के मॉडल रखे गए हैं। चबूतरे पर मिट्टी के घड़ा से लेकर सौर मण्डल के मॉडल तक तथा हाथ-करघा से लेकर कम्प्युटर के मॉडल तक रखे गए हैं।

विजय जी ने हमें उन चीजों से कुछ इस तरह से परिचित करवाया, ''जार में जो यह पानी देख रहे हैं, यह पुरी के समंदर का पानी है। यह रेत गुजरात समुद्र-तट का है, यह लौह खनिज का पत्थर बैलाडिला का है और यह कोयला कोरबा का है।'' सचमुच उनका यह अंदाजे-बयां लाजवाब था। हम यही सोचते रहे कि जब वे कक्षा में पढ़ाते होंगे, तब बच्चों को कितना दिलचस्प लगता होगा! फिर उन्होंने कहा कि इन सब चीजों को कभी उन्होंने अपने निजी दौरों में तो कभी अधिकृत दौरों के दौरान इकट्ठा किया है। इनमें से कई चीजों को कुछ मित्रों के जरिये भी मँगवाया है। जो भी हो, उनकी यह कक्षा एक जीती-जागती मॉडल बन गयी है। यही वजह है कि कभी यह स्कूल काफी चर्चित रहा और इस स्कूल को देखने के लिए 4 साल के दौरान तकरीबन 5000 अधिकारी और शिक्षक आए। जब वे इस स्कूल में थे, तब 40 बच्चे थे, पर अब कम हो गए हैं। उन्हें इस बात का दुख है कि आज बच्चों के अध्ययन के दौरान इन मॉडलों का उपयोग नहीं हो रहा है। लेकिन वे इन सब बातों से निराश नहीं होते। अब वे जिस स्कूल में हैं (माध्यमिक विद्यालय, नवागाँव) वहाँ भी कुछ साथी शिक्षकों से उन्हें उतना सहयोग नहीं मिल रहा है। इसके बावजूद उन्होंने अपना मिशन जारी रखा है। उन्हें उम्मीद है कि आगे चलकर यही शिक्षक उनका साथ देंगे।

हम जिस दिन उनके स्कूल पहुँचे थे, उस समय स्कूलों में दशहरा-दीपावली की छुट्टी चल रही थी। इसके बावजूद स्कूल में विजय साहू और कुछ छात्र-छात्राएँ मौजूद थे। ''अभी छुट्टी के दौरान हम 2-4 दिन छोड़कर रोज स्कूल आते हैं। हम बच्चों को स्कॉलरशिप की तैयारी करवा रहे हैं। हम कभी सामान्य ज्ञान तो कभी और किसी दूसरे विषय पर चर्चा करते हैं। साथ ही, बच्चे कम्प्युटर पर भी प्रैक्टिस करते हैं। मुझे कम्प्युटर चलाने नहीं आता, पर बच्चे कर लेते हैं।'' विजय साहू ने कहा।

''आप प्रयोगात्मक ज्ञान को इतना तरजीह क्यों देते हैं?'' इस सवाल के जवाब में उन्होंने कहा, ''पुस्तकीय ज्ञान और व्यावहारिक ज्ञान में काफी फर्क होता है। मैं आपको इसका एक उदाहरण देना चाहूँगा। करीब 20-25 साल पहले की बात है। जब पत्र-व्यवहार आम बात थी, तब मैं हाईस्कूल में था। किसी ने एक अंतरदेशीय लिफाफे में चिट्ठी लिखी और पोस्ट बॉक्स में डाला। कुछ दिन बाद वह चिट्ठी उसके पास वापस लौट आयी। देखने पर पता चला कि भेजने वाले ने भेजने वाले के स्थान पर पाने वाले का नाम और पाने वाले की जगह पर भेजने वाले का नाम लिख दिया था। इससे साफ हुआ कि वह चिट्ठी लिखना तो जानता था, पर किसका पता कहाँ लिखना है, वह यह नहीं जानता था। इसलिए यह उलट-पुलट हुई। इसलिए व्यावहारिक ज्ञान बहुत जरूरी है।''

फिलहाल, इस नए स्कूल में उनके साथ 4 शिक्षक और 115 बच्चे हैं। प्रधान शिक्षक पूर्णकालिक हैं। विजय साहू का मानना है कि शिक्षक 2 प्रकार के होते हैं - एक काम को बोझ समझते हैं, दूसरे इसे अपना दायित्व समझते हैं।

उनके स्कूल की दीवार का रंग अन्य सरकारी स्कूलों की दीवारों के रंग जैसा नहीं है। उनके स्कूल की दीवार हाल ही में रँगी गयी है। इस पर उन्होंने कहा, ''दरअसल बच्चों ने अपनी पसंद से खुद इस रंग की पोताई की है। यही नहीं, हमारे यहाँ स्कूल ड्रेस भी 2 कलर के हैं। बच्चे अलग-अलग दिन अलग-अलग कलर के ड्रेस पहन के आते हैं।'' इस पर हमने सवाल किया कि गाँव के गरीब बच्चों के माँ-बाप पर यह आर्थिक बोझ नहीं है क्या? इस पर उनका जवाब था, ''यहाँ के बच्चे माँ-बाप से पैसा नहीं माँगते, बल्कि धान-कटाई आदि के समय खेतों में काम करते हैं और इतना पैसा कमा लेते हैं कि अपनी जरूरतें पूरी कर लें। यहाँ बच्चे काफी एक्टिव हैं और ये सब अलग-अलग कक्षा की क्यारियों की देख-भाल करते हैं, पानी देते हैं। अब हम यहाँ बच्चों के लिए विज्ञान से संबंधित प्रयोगशाला तैयार करेंगे, जहाँ जितना हो सके प्रत्यक्ष करके दिखाएँगे।''

बच्चों के साथ इस तरह से काम करने की प्रेरणा उन्हें अपने शिक्षक से मिली है। उनका कहना है, ''हमारे शिक्षक शिक्षक जैसे नहीं लगते थे। वे हमारे साथ दोपहर में बैठकर खाना खाते थे। अब हम भी अपने बच्चों के साथ बैठते हैं।'' यही नहीं, विजय साहू ने कई बच्चों को ड्रेस भी दी है, किसी को कॉपी भी खरीद कर दी है। इस तरह वे अपने छात्र-छात्राओं को मदद करते रहते हैं। उन्हें शिक्षक के रूप में काम करते हुए दो दशक से ज्यादा हो चुके हैं और उनके कई शिष्य उनके सहकर्मी भी बन चुके हैं। उनमें कुछ ऐसे हैं जो काम को काम करने जैसा करते हैं, पर कुछ ऐसे भी हैं जो काम को समर्पण भाव के साथ करते हैं। इन पर विजय जी को गर्व है।

विजय साहू स्वयं के परिवार में तीसरी पीढ़ी के शिक्षक हैं। उनके पिताजी और दादाजी भी शिक्षक थे। विजय साहू शिक्षक बनना नहीं चाहते थे। वे सेना में भर्ती होना चाहते थे। सेना में उनका चयन भी हो गया था, पर पारिवारिक वजह से वे अंततः शिक्षक बन गए। ''शुरू में यह काम बहुत झंझट लगता था, पर बाद में इस पेशे से लगाव हो गया। सोचा कि इन बच्चों के कारण मेरा दानापानी और परिवार चल रहा है। वहाँ से मेरी दिशा बदल गयी और मैं बच्चों के भविष्य-निर्माण में समर्पित हो गया।''

विजय जी शैक्षणिक परिदर्शन में गुजरात गए थे। वे वहाँ की शिक्षा-व्यवस्था से काफी प्रभावित हुए हैं। उन्हें छत्तीसगढ मे गुणवत्ता-सुधार की आवश्यकता दिखाई देती है। वे मानते हैं, ''शिक्षक अच्छे हों तो शिक्षा की तस्वीर बदल सकती है।''

पुस्तकालय के लिए पुस्तक-दान की चाह

१५

''न तो हमें रुपये-पैसे चाहिए और न ही किसी तरह का दान! अगर आप कोई चीज दान-स्वरूप देना चाहते हैं तो आप हमें पुस्तक का दान दें।'' यह है उस गाने का अर्थ जिसे छत्तीसगढ़ राज्य के कोरिया जिले के बैकुंठपुर ब्लॉक की आजादनगर प्राथमिक शाला के प्रधान पाठक सत्यपाल सिंह ने तैयार किया है और जिसके माध्यम से उन्होंने अपने स्कूल में एक पुस्तकालय के लिए लोगों से सहयोग के बतौर दान में पुस्तक लेने की योजना बनाई है। आजादनगर के बाशिन्दा आदिवासी शिक्षक सत्यपाल सिंह ने यह अनोखा प्रयोग आखिर क्यों और कैसे किया, चलिए उनसे ही जानने की कोशिश करते हैं।

सत्यपाल सिंह प्राथमिक शाला, आजादनगर में पदस्थ हैं। आजादनगर ग्राम छत्तीसगढ़ राज्य में कोरिया जिले के कोटा पंचायत में है, जो बैकुंठपुर विकास - खंड के कोटकोना संकुल में स्थित है।

''हमारे गाँव के ज्यादातर लोग अशिक्षित हैं। इसलिए जब शैक्षणिक नेतृत्व कार्यक्रम के तहत परियोजना बनाने की बारी आई, तब मैंने सोचा कि हम एक पुस्तकालय बनाएँ जिससे सभी को पढ़ने-लिखने का एक मौका मिलेगा। साथ ही, हमारे बच्चे और शिक्षक सभी उस पुस्तकालय का उपयोग कर सकेंगे।''

''आपने इसकी शुरुआत कैसे की और पुस्तकालय क्यों चुना?''

''पुस्तकालय चुनने का कारण है - शिक्षक और बच्चों में पुस्तक पढ़ने की आदत और लालसा विकसित करना। पढ़ी गई रुचिकर बातें अपने साथियों से साझा करना। शैक्षणिक नेतृत्व विकास कार्यक्रम के अंतर्गत मैंने टी-3 के आखिरी पन्नों में छरछा ग्राम के बारे में पढ़ा था। उसमें छेरछेरा त्यौहार का उल्लेख था। उसमें गाँव की श्रीमती कन्या मैडम द्वारा छेरछेरा उत्सव के दिन पुस्तक-संग्रह करने के एक अनोखे और आकर्षक प्रयास की चर्चा थी। विकास-खंड में इस बात की अच्छी सराहना की गई थी। उससे प्रेरित होकर मैंने उसमें और नवीनता लाने का प्रयास किया। खुद विचार किया कि मैं कुछ इतना अच्छा कर दिखाऊँ कि हमारे स्कूल का भी संकुल-स्तर पर नाम हो।''

उन्होंने आगे कहा, ''क्योंकि थोड़ी-थोड़ी कलाकारी भी है हममें, थोड़ी-बहुत हारमोनियम और ढोलक भी बजा लेता हूँ। हमारे पास संगीत के सामान की कमी तो थी नहीं, इसलिए बच्चों को ढोल-मंजीरा पकड़ाया। एक नवीनता उसमें बच्चों ने भी जोड़ी और कहा कि सर! मुखौटा लगाकर हम नाचेंगे भी.... इस तरह नाचने के लिए भी प्रेरित हुए बच्चे। 'ठीक है, तुम वह भी करो' कहा हमने। फिर हम लोग तैयार हुए और गाँव में गए। हम सब ढोल-मंजीरा बजाकर नाचते-गाते गाँव में गए। बच्चे अलग मुखौटों में नाच रहे थे। लोग बहुत प्रभावित हुए। कई लोग हमें पुस्तकालय के लिए पैसा देने लगे! पर हमने पहले से बच्चों से कह दिया था कि हमें दान में कोई पैसा नहीं लेना है, सिर्फ पुस्तक लेना है। यह बात मैंने गाँव में घर-घर जाकर पहले भी बता दी थी कि हमारे आजाद नगर स्कूल से जब भी बच्चे पुस्तक दान लेने आएँगे, तब हम सभी शिक्षक साथी भी साथ में आएँगे। तब आप सिर्फ पुस्तक देंगे, जो नई-पुरानी पुस्तक आपके घर में हो। चाहे वह पुस्तक कहानी की हो, छोटा ग्रंथ हो, वह सब आप दान कर सकते हैं।''

‘‘आप क्या गाना गाते थे?’’

‘‘हम यह गाना गाते थे -

लाएँगे हम क्रांति गाँव में, जाएँगे हम गाँव-गाँव में!

गाँव-गाँव में, गाँव-गाँव में, जाएँगे हम गाँव-गाँव में.....

इसके आगे है...

सबसे पहले स्वास्थ्य जरूरी, घर बाहर के उतनी जरूरी,

रहे ना बीमारी गाँव में, जाएँगे हम गाँव-गाँव में।

उसके बाद हमारे गाँव में लोकड़ी गीत गाते हैं ......

उसको मैंने इस तरह से पिरोया था, और यह तब गाते थे, जब लोग दान देने में देरी करते थे...

बांसपान रटपट रटपट

हमला देहीय झटपट झटपट

ना तो चाहि रुपया पैसा, ना तो चाहि दान ......

हमला दे देहीय भैया पुसतक दान......

हमला दे देहीय भैया पुसतक दान......

यह भी था......

हम सब स्कूल खत्म होने के बाद 4 से 5 बजे के बीच इस पुस्तक-संग्रह अभियान में निकलते थे। वह बहुत ही अद्भुत अनुभव था, जो न केवल हमें और बच्चों को बल्कि गाँव वालों को भी अच्छा लगा।’’

‘‘अब आपका पुस्तकालय तैयार है तो अब आपको कैसा लग रहा है?’’

‘‘अब बहुत ही अच्छा लग रहा है। मैं इतने में ही संतुष्ट नहीं हूँ, अभी उसे और बढ़ाने का प्रयास करूँगा।’’

‘‘क्या अब बच्चे भी यह कह रहे हैं कि हमारे टीचर बदल गए हैं?’’

‘‘जी..... पहले क्या होता था कि मैं जब भी कुछ बताता था तो एक्शन नहीं करता था। अब मैं कोई भी चीज बताता हूँ तो एक्शन करके बताता हूँ। मेरी एक खासियत है कि मैं जब एक कहानी सुन लेता हूँ तो उसे भूलता नहीं हूँ। इस तरह हमारे अंदर जो बदलाव आया है, उसका असर तो बच्चों के ऊपर पड़ेगा ही और वे निश्चित

तौर पर उसे महसूस करेंगे ही।''

''हमारे गाँव में 30-40 घर हैं और आबादी 320 है। अभी स्कूल में 43 बच्चे हैं।'' फिर सत्यपाल जी थोड़ा झिझकते हुए बोलते हैं, ''अब हमारे स्कूल की ऐसी अच्छी इमेज बन गई है कि कुछ प्राइवेट स्कूल के बच्चे भी इस स्कूल में दाखिला ले रहे हैं। अभी तक 5 बच्चे प्राइवेट स्कूल से आ चुके हैं।

हमारे यहाँ पहली कक्षा में 10 बच्चे हैं, उनमें से सिर्फ एक बच्चा 'मात्रा' सीख रहा है, बाकी सभी 9 बच्चे हिन्दी किताब पढ़ना सीख गए हैं! उसके अलावा इंग्लिश के अक्षर 'ए टू जेड' तक लिखना और बोलना सीख गए हैं। मैं यह प्रयास करता हूँ कि बच्चे पहली और दूसरी कक्षा में ही किताब पढ़ना सीख जाएँ, ताकि आगे परेशानी न हो।''

''आप भविष्य में अपने स्कूल को किस तरह से देखना चाहेंगे?''

''मैं आगे भविष्य में यह देखना चाहूँगा कि जिस गाँव के स्कूल में मैं अध्यापन कर रहा हूँ, वहाँ के सभी लोग पढ़े-लिखें और शिक्षित वर्ग के हों। वहाँ मेरे विद्यार्थी समाज में एक अच्छा नागरिक के रूप में दिखें।''

खेल-खेल में पढ़ाई १६

धमतरी से तकरीबन 12 किमी दूर बसे धौराभाटा गाँव में आदिवासी आबादी सबसे ज्यादा है। इस गाँव में एक शासकीय प्राथमिक शाला है। जाहिर है, इस स्कूल में आदिवासी बच्चे भी बड़ी संख्या में हैं। स्कूल में 5 कक्षाओं के लिए प्रधान पाठक राकेश चंद्राकार समेत 4 शिक्षक हैं। बाकी तीन शिक्षक हैं-सुश्री हेमलता रात्रे, तामेश्वरलाल निषाद और रोशन ध्रुव। स्कूल के कृषि फंड की सहायता से गाँव की ही एक युवती शिक्षक के बतौर अपनी सेवा दे रही हैं। स्कूल में कमरों की कमी नहीं है। पर यहाँ खेल मैदान नहीं है। इसके बावजूद, यहाँ बच्चे खेल बिलकुल खेलभावना के साथ और लिंगभेद से ऊपर उठकर खेलते हैं। इन खेलों को खेलते देखना बहुत अच्छा लगता है। हमने देखा - जब लड़के-लड़कियाँ कबड्डी खेल रहे थे, तब लड़कियाँ लड़कों पर भारी पड़ती नजर आ रही थीं।

यह स्कूल जिस वजह से सबसे ज्यादा ध्यान आकर्षित कर रहा है, वह है इस स्कूल की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा। हम गुणवत्तापूर्ण शिक्षा किसे कहते हैं? शिक्षा के अधिकार के तहत स्कूल में क्या देखना चाहते हैं? यह सब इस स्कूल में काफी हद तक दिखाई देने लगा है। हालाँकि इस बात से स्कूल के प्रधान पाठक राकेश चंद्राकार इत्तेफाक नहीं रखते। वे कहते हैं कि हमने तो अभी शुरू ही किया है। उनकी यही बात स्कूल में बहुत कुछ और होने की तथा बहुत कुछ और करने की संभावना को विस्तार देती है और उम्मीद जगाती है। यह स्कूल और किसी को आकर्षित करे या न करे, बच्चों को काफी आकर्षित करता है। यही वजह है कि बच्चे स्कूल खुलने के पहले ही वहाँ पहुँच जाते हैं और स्कूल से छुट्टी होने की घंटी बजने के बाद भी वहाँ कुछ और समय बिताने की बात करते हैं। हमने यहाँ देखा कि दूसरी कक्षा के बच्चे कुछ पेंटिंग कर रहे थे और छुट्टी की घंटी बज गई। शिक्षक ने कहा कि छुट्टी हो गई, पर बच्चे टस से मस नहीं हुए। उन्होंने कहा, ''और थोड़ी देर में इसे खत्म करके अपने घर जाएँगे।''

तीसरी कक्षा में हेमलता जी एक खेल खेलाते हुए देखी गईं। इस कक्षा में हमने देखा कि बच्चे गणित का पाठ खेल रहे थे। वह भी बहुत चाव से। 2 बच्चों ने सबकी कॉपी, किताब, पेन, पेंसिल, कंपास-बॉक्स इकट्ठा करके बुक स्टोर खोल रखा है और बाकी बच्चे कागज की करेंसी बनाकर वह सब खरीद रहे हैं। इस तरह योग और वियोग का पाठ पढ़ने के साथ-साथ वे एक बाजार में खरीद -फरोख्त का अनुभव कर रहे हैं। इस तरह वे कक्षा के अंदर और बच्चों के पास मौजूद सामग्रियों का उपयोग टी.एल.एम. मैटिरियल की तरह कर रहे थे। वैसे ही चौथी कक्षा के बच्चे एक टेप पकड़कर स्कूल की लंबाई-चौड़ाई नाप रहे थे। पूछने पर पता चला कि वे क्षेत्रफल कैसे निकालते हैं - वह देख रहे हैं और सीख रहे हैं।

यह स्कूल निश्चित तौर पर हमें थोड़ा खास लगा। स्कूल के प्रधान पाठक राकेश चंद्राकार चौथी कक्षा को पढ़ाते हैं। उनके विषय हैं अँग्रेजी और गणित। चौथी कक्षा में अँग्रेजी की घंटी में रोज बच्चों की पढ़ाई का एक नियमित हिस्सा है कई-कई शब्द लिखना, स्पेलिंग की गलती हो तो सुधारना और अलग-अलग विषय पर 4-5 लाइन अँग्रेजी में बोलना। राकेश जी की कक्षा के सभी बच्चे अँग्रेजी में किसी विषय पर चार लाइन आराम से बोल पाते हैं। बच्चे हर रोज अँग्रेजी के कई शब्द ब्लैक-बोर्ड पर लिखते हैं, जिससे उनका अँग्रेजी का शब्द-भंडार बढ़ता है, साथ ही

स्पेलिंग भी सही होती है। वे यह सब किसी न किसी खेल के जरिये करते हैं। इससे बच्चे जबर्दस्त तरीके से उसमें हिस्सा लेते हैं। प्रधान पाठक राकेश चंद्राकार का कहना है, ''हम बच्चों को बहुत ज्यादा बोलने का मौका देते हैं। जब हम चाहते हैं कि बच्चे हमारी बात सुनें तो हमें भी उनकी बात सुननी होगी और एक तरह का सामंजस्य बनाए रखना होगा।''

सबसे आश्चर्य तो पहली कक्षा को देखकर हुआ। पहली बार तो मुझे लगा ही नहीं कि यह पहली कक्षा है। यहाँ एक बात अद्भुत दिखाई दी - जब शिक्षक कक्षा में नहीं होते थे, तब बच्चे बड़ी ही गंभीरता से कुछ लिखते-पढ़ते नजर आते थे। पर जैसे ही शिक्षक अंदर आते थे, तब वे उछलकूद करते हुए काफी उत्साहित नजर आते थे। इस पर शिक्षक रोशन ध्रुव का कहना है कि शिक्षक की अनुपस्थिति में बच्चे जो लिखे हुए रहते हैं, शिक्षक के आने पर उसे दिखाने और अपनी बात बताने की उनमें होड़ लगी रहती है। पहली कक्षा के शिक्षक रोशन ध्रुव ने अपनी कक्षा की शुरुआत कुछ इस तरह से की - उन्होंने सभी बच्चों से पूछा, ''कल इतवार को तुम लोगों ने क्या-क्या किया।'' सभी बच्चों ने जो कहा, उन्होंने उसे ब्लैक-बोर्ड पर लिखा। कल कोई खेत गया था, कोई बेर खाने गया था, कोई गुलेल लेकर गया था, कोई अपने भाई-बहनों के साथ लुकाछिपी खेला था, आदि-आदि। बच्चे उसमें दिलचस्पी लेते दिखाई दिए। उन्हें ऐसा लग नहीं रहा था कि वे पढ़ाई कर रहे हैं। इसके माध्यम से एक साथ कई जानकारी मिल रही थी। बच्चों को लग रहा था कि उनकी छोटी-छोटी बातों में भी उनके शिक्षक की दिलचस्पी है।

स्कूल की पालक कमेटी की एक सदस्या हैं सुनीता ध्रुव। इनका मानना है, ''हमारे गाँव का यह स्कूल खास है। यहाँ बच्चों को डराया-धमकाया नहीं जाता, क्योंकि बच्चे दबाव से हड़बड़ा जाते हैं। यही वजह है कि यहाँ बच्चे निडर हैं, बेरोकटोक सबसे बात कर सकते हैं।'' दूसरी कक्षा की छात्रा रिचा की माँ हैं यह सुनीता ध्रुव। हमने उनसे पूछा, ''आपकी बच्ची इस स्कूल में पढ़ाई करती है, उससे आपके घर को क्या फायदा मिलेगा?'' उनका जवाब था, ''रिचा ने अपने पापा के हाथ से गुटखा झिल्ली छिन ली और कहा कि 'पापा! आज के बाद गुटखा नहीं खाना, इससे कर्क रोग होता है। इससे शरीर को नुकसान पहुँचता है। इसको नहीं खाना चाहिए।' बच्चे की वह बात सुनकर उसके पापा बोले कि 'आज मुझे बहुत बड़ी शिक्षा मिली है।' तबसे उसके पापा ने गुटखा खाना छोड़ दिया।''

हमने उनसे कहा, ''आप उसके पापा को पहले मना नहीं करती थीं क्या?''

''मैं मना करती थी, पर वे उस पर ध्यान नहीं देते थे। लगता है, बच्ची की बात उनके दिल को छू गई है - छोटी बच्ची ने मुझे इतनी बड़ी बात कह दी।''

स्कूल में हो रहे इस तमाम बदलाव के बारे में वहाँ के शिक्षक कहते हैं, ''इस बदलाव के लिए सबसे पहले हम अपने में काफी बदलाव लाए हैं और यह कोशिश जारी है। जैसे-जैसे हम अपने-आप में बदलाव ला रहे हैं, हम जितना नया सीख रहे हैं, बच्चों के साथ अपनी जितनी व्यस्तता बढ़ा रहे हैं, पालकों से जितना मिल रहे हैं, वैसे-वैसे उसका असर स्कूल में दिखाई दे रहा है। हम मानते हैं कि यह तो बस शुरुआत है। यही वजह है कि आज जिले के शिक्षा अधिकारी भी इस स्कूल को एक अच्छा स्कूल मानते हैं। यह स्कूल चरितार्थ करता नजर आता है, ''एक सामान्य शिक्षक पढ़ाता है, एक अच्छा शिक्षक सिखाता है और उत्कृष्ट शिक्षक प्रेरित करता है।''

इसके अलावा, यहाँ का मध्याह्न भोजन काफी स्वादिष्ट है। बच्चे इससे काफी संतुष्ट नजर आए। यहाँ सबके लिए शौचालय है। इसकी साफ-सफाई का ध्यान भी रखा गया है। स्कूल में कृषि फंड का उपयोग स्कूल में पानी सप्लाई से लेकर रंगरोगन तक के लिए किया जाता है। इस तरह यह स्कूल कई मायने में अपनी एक अलग पहचान बना चुका है। आने वाले दिनों में यह स्कूल और भी बेहतर करेगा, इसमें शक की कोई गुंजाइश नहीं है।

Azim Premji Foundation

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
छत्तीसगढ़